डाकबंगला

कमलेश्वर

अनेक पुरुषों की अंकशायिनी बनी विवश युवती की कथा

9.432
१४९डा

Jayanta K. Rajguru

डाक बंगला

'तेरे ये पहाड़, नदियां, वादियां, झरने, जंगल—सच पूछ तो मुझे बिलकुल नहीं बांधते। कोशिश करके भी मैं इनमें रम नहीं पाती। सीधे-सीधे कहूं तो मैं सिर्फ आदमी से प्यार कर सकती हूं···उससे सुन्दर कुछ और है भी तो नहीं···' और आदमी को प्यार करते-करते इरा की जिन्दगी एक डाक बंगला बन गई, जहां लोग आए, रुके और चले गए!

कमलेश्वर के प्रख्यात उपन्यास 'डाक बंगला' पर बनी फिल्म का यह सचित्र स्क्रिप्ट है, जिसमें अत्यंत रोचक कथानक, सशक्त संवाद तथा मन को भिगो देने वाले दृश्य हैं।

मूल्य
2·00

हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटिड
जी० टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली-११००३२

डाकबंगला

कमलेश्वर

समय की मार से डाक बंगला-सी बन चुकी
एक युवती की दर्द-भरी सचित्र कहानी

© कमलेश्वर, १९७४

DAAK BANGLA

FILM-SCRIPT

KAMLESHWAR

पात्र

इरा	:	सिमी गरेवाल
विमल	:	शुभेंदु चटर्जी
हेमेंद्र बतरा	:	नितिन सेठी
डा० चन्द्रमोहन	:	भगवान साहू
शीला	:	गीता
ब्रिगेडियर वर्मा	:	इफ्तिख़ार
श्रीमती कृष्णन	:	वीना वर्मा
भाभी	:	ललिता कुमारी
रामजी	:	सत्यभान सिनहा
रेशमा	:	मीता खुराना
दमयंती	:	रशीदा ठाकुर

कथा, पटकथा, संवाद	:	कमलेश्वर
छायाकार	:	नरिमन ए० ईरानी
संगीत	:	श्याम सागर
गीत	:	अनजान
सम्पादन	:	हृषीकेश मुकर्जी
ध्वनि	:	देवेश घोष
कला निर्देशन	:	जे० पी० सिनहा
प्रसाधन	:	वसंत
निर्माता-निर्देशक	:	गिरीश रंजन

डाक बंगला

कश्मीर। पहलगाम से लिद्दरवट जाने वाला रास्ता—एकदम सीधा। आकाश को छूती हुई पेड़ों की चोटियां। चीड़ के पेड़ रास्ते के दोनों ओर इस तरह छाए हैं कि रास्ता सुरंगनुमा बन गया है। सूरज की किरणें चीड़-वनों में उजाला भरे हुए हैं। वे रास्ते को एक अजीब-से पैटर्न में बांधे हुए हैं—मगरमच्छ की पीठ के से पैटर्न में।

दो अलग-अलग घोड़ों पर सवार तिलक और इरा रास्ते पर आगे बढ़ रहे हैं। इरा चेहरे पर छितरा आए अपने बालों को एक हाथ से पीछे करती है और बड़ी उदास-सी नज़रों से तिलक की ओर देखती है। उसकी निगाह में थकान, उदासी और प्रश्नसूचकता के मिले-जुले भाव हैं। तिलक भी घोड़े की लगाम को थामे गंभीर-उदास-सा है। दोनों रास्ते को छोड़कर डाक बंगले की ओर जाने वाले पथरीले रास्ते पर उतर जाते हैं। पृष्ठ-भूमि में दूर पर डाक बंगला नज़र आ रहा है। एक घोड़े पर सामान लादे एक कश्मीरी मज-दूर पहले ही वहां पहुंच चुका है।

तिलक घोड़े से उतरकर डाक बंगले के पीछे तराई में उतर गया है। इरा घोड़े से उतर

चुकी है और घोड़े को पुचकार रही है। दूर से तिलक की आवाज़—'चौकीदार! चौकीदार!' इसके साथ ही घोड़े की टापों की आवाज, जैसे कोई दूर से घोड़े को सरपट दौड़ाता चला जा रहा हो। इरा उधर देखती है। झुरमुटों के बीच से एक आदमी डाक बंगले के सामने वाली सड़क पर घोड़ा दौड़ाए लिए जा रहा है। इरा के चेहरे पर की उदासी और गांभीर्य धीरे-धीरे पिघलने लगता है। आंखों में पहचान का सा भाव आने लगता है। उसके होंठों पर मुसकान की एक पतली-सी रेखा उभरने लगती है। घोड़े पर सवार व्यक्ति ठीक इरा के सामने से गुजर जाता है। इरा के होंठों की मुसकराहट और भी फैल जाती है। आंखों की उदासी पूरी तरह लुप्त होने लगती है और उसमें एक चांचल्य उभर आता है। जैसे अपने सभी बंधनों को तजकर वह पुकारती है:

इरा : (मुक्त कंठ से) सोलंकी! ...

घोड़े पर जाता हुआ सोलंकी यकायक घोड़े की लगाम खींचता है और साथ ही पीछे घूमकर देखता है। उसके चेहरे पर भी पहचान का सा भाव उभरता है। अपने घोड़े को एकदम मोड़ते हुए वह उसे एड़ लगाता है और इरा के पास आकर रुक जाता है। इरा आगे बढ़कर सोलंकी के घोड़े की लगाम पकड़कर खड़ी हो जाती है। घोड़े से उतरते हुए सोलंकी कहता है:

सोलंकी : तुम! तुम यहां कैसे आ गईं...?

इरा : बस, आ गई घूमते-घामते...

उधर तिलक चौकीदार को न पाकर तराई से वापस ऊपर आता है और इरा के साथ किसी अजनबी को देखकर ठिठक जाता है। वह डाक बंगले के चबूतरे से पीठ टिका-

कर खड़ा हो जाता है।

सोलंकी ओवरकोट से पाइप और पाउच निकालकर पाइप में तम्बाकू भरने लगता है। साथ ही वह बोले जा रहा है :

सोलंकी : मेरा घोड़े वाला कह रहा था : साहब, पहाड़ी रास्ते पर घोड़ा दौड़ाएंगे तो टांग साफ टूट जाएगी—यह फौज का नहीं विज़िटर लोगों का पोनी है, साहब पोनी··· (पाइप सुलगाता है)

मुंह से धुआं उगलते हुए सोलंकी अपने फौजी बूट से घोड़े के टखने पर ज़ोर से चोट करता है और ठठाकर हंस पड़ता है। हंसी के बीच ही उसकी नज़र तिलक पर पड़ती है। इरा इस नज़र को भांप जाती है और उसे हठात् तिलक का घ्यान हो आता है। एकदम चौंककर वह कहती है :

इरा : ये तिलक हैं···मेरे मित्र···बहुत बड़े लेखक हैं···और ये हैं मेजर सोलंकी।

सोलंकी : रिटायर्ड।

दोनों हंस पड़ते हैं।

सोलंकी लपककर तिलक से हाथ मिलाता है। तिलक उसे गौर से देखता है।

सोलंकी : वेरी ग्लैड टु मीट यू···मैंने लेखक देखे ही नहीं थे···(कुछ इस भाव से कि जैसे लेखक कुछ अलग होते हैं)

तिलक : थैंक यू···आदमी तो देखे होंगे···

सोलंकी : (हंसकर) प्लीज़, डोंट माइंड माई वर्ड्स··· फौजी आदमी हूं···बात करने का सलीका ज़रा··· (कंधे उचका देता है; फिर एक झटके से इरा की ओर मुड़कर) लेकिन, हम लोग यहां क्यों खड़े हैं ?

सोलंकी उधर की ओर कदम बढ़ाता है जिधर से अभी-अभी तिलक आया था। चौकीदार का क्वार्टर उसी ओर है। सोलंकी आवाज़

लगाता है :

सोलंकी : (पुकारता है) चौकीदार! ...चौकीदार! ...

दूर से चौकीदार की आवाज़ आती है :

चौकीदार : आया, साब...

चौकीदार निकलकर आता है।

सोलंकी : चावी किधर है ?

चौकीदार : वो तो साब लोग साथ ले गया...कप्तान लोग है...ग्लेशियर देखने गया है...

सोलंकी : तो इधर हम सर्दी में मुर्गा बनेगा ! ठीक है। तुम जाओ ! ...चलो, इरा...चलिए, तिलक साहब...

बिना किसी उत्तर की प्रतीक्षा किए, सोलंकी सीढ़ियां चढ़ने लगता है, तेजी से।

इरा : (चौकीदार से) चाय पिला सकते हो ?

चौकीदार : अबी लाएगा। (लौट जाता है)

इरा और तिलक धीरे-धीरे सोलंकी के पीछे जाते हैं। ऊपर आकर सोलंकी कमरे के दरवाज़े के पास रुक जाता है। इधर-उधर देखता है जैसे कुछ ढूंढ़ रहा हो। फिर वह अपने बूट से ताले पर ज़ोर से ठोकर मारता है। ताला झूल जाता है। सोलंकी दरवाज़ा खोलता है, बूट की ठोकर से ही।

कमरे में बिस्तर बिखरा पड़ा है। चादर सलवटों से भरी है। तकिये के पास ही उतरी हुई सिल्क की साड़ी पड़ी है। एक कोने में अंडों के छिलके, ब्रेड के रैपर। जैम की शीशी कार्निस पर। फर्श पर सिगरेट के टुकड़े। खाट के नीचे खुला होल्डाल। उसीके पास लुढ़का हुआ एक गिलास। साड़ी के ऊपर ही पड़ी हुई ब्रेज़ियर। सोलंकी आगे बढ़कर ब्रेज़ियर समेत साड़ी को उठाता है और उन्हें बाहर फेंक देता है। तकिये को उठाकर भी वह बाहर फेंकने जा

रहा है कि उसके नीचे पड़ी आधी खाली रम की बोतल देखकर वह ठिठक जाता है।

सोलंकी बोतल उठा लेता है और फिर खुद ही बुदबुदा उठता है :

सोलंकी : ब्रूट्स ! सैवेजेज़ ! [वहशी ! जंगली]

वह बोतल का ढक्कन खोलता है और गटागट चार-पांच घूंट पी जाता है।

इरा और तिलक दरवाज़े के पास ही खड़े हैं। सोलंकी को रम पीते देखकर तिलक चुपचाप मुड़कर, सीढ़ियों से उतरकर डाक बंगले के सामने चला जाता है। इरा चबूतरे के ऊपर बरामदे की किनारी पर कुहनियां टेककर खड़ी हो जाती है। तिलक सिगरेट का पैकेट निकालकर सिगरेट होंठों पर लगाता है, फिर उसे सुलगाकर एक लंबा कश लेता है और धुआं छोड़ देता है।

सोलंकी बरामदे में पड़ा सामान घसीट-घसीटकर भीतर कर देता है और हाथ झाड़ता हुआ आता है। तभी चौकीदार चाय की ट्रे लेकर आता है। दरवाज़ा खुला देखकर कुछ आश्चर्य में पड़ता है। कुछ घबराहट ज़ाहिर करता है। फिर वहीं मेज खींचकर ट्रे रख देता है। सोलंकी आखिर होल्डाल को पैर से ठेलकर मुड़ता ही होता है कि इरा कहती है :

इरा : बहुत मेहनत कर ली, अब चाय पी लीजिए···

सोलंकी : क्यों मज़ाक करती हैं, इराजी ! यह कोई चाय का वक्त है ! (ज़रा-सा उचककर चबूतरे से लगे खड़े तिलक को देखता है) क्या खयाल है, राइटर साहब, अपने पास इंतज़ाम है !

वह भीतर जाकर अपना सूटकेस उठा लाता है। इरा चाय बनाती रहती है। सोलंकी सूटकेस खोलता है। उसमें ऊपर ही रम की

एक बोतल है जो टूट गई है। कपड़े भीग गए हैं। वह बोतल के टुकड़े वहीं फर्श पर रख देता है, फिर कपड़े को फटकारते हुए :

सोलंकी : पियो-पियो, तुम भी पियो···इरा, तिलक, चलो, आओ···

तिलक ऊपर आकर इरा के पास वाली कुर्सी पर बैठ जाता है। सोलंकी कपड़ों में व्यस्त है। उन्हें हाथ से टटोलता है। उन्हें भीगा पाकर :

सोलंकी : सब पी गए!···कोई बात नहीं!···(कपड़ों के नीचे से दूसरी बोतल निकालता है। वहीं खिड़की की कार्निस पर गिलास रखता है। पास पड़े थर्मस के दो गिलास निकालकर उनमें ढालता है। थर्मस से पानी मिलाकर दो गिलास लाकर ट्रे में रख देता है। फिर तीसरा लाते हुए कहता है:) लीजिए, यह चाय हटाइए···

इरा : नो, थैंक्यू।

सोलंकी : आप लीजिए, तिलक साहब···

तिलक : मैं भी चाय ही···

सोलंकी : ओ० के०!···(कंधे झटकता है। फिर अपने बड़े गिलास में दोनों गिलासों को उंड़ेल लेता है और लंबे-लंबे दो घूंट लेकर गिलास सामने रख लेता है। जेब से सिगार निकालकर उसे जलाता है और फिर मुसकराकर इरा से कहता है:) ठंड काफी है, एक पेग ले लेतीं तो अच्छा रहता···

इरा चाय की प्याली अंगुलियों में फंसाए मुसकरा देती है। सोलंकी अपने में मस्त बैठा है। पैरों की थाप पर वह धीरे-धीरे गुनगुनाता रहता है—'लव मी टेंडर···ओ ओ लव मी टेंडर!'

तिलक चाय का घूंट भरकर उठ खड़ा

होता है।

तिलक : पानी गरम करवा लें···ज़रा हाथ-मुंह घो लिया जाए···(जैसे इरा की स्वीकृति लेकर लंबे गलियारे में किचन की तरफ जाता है)

सोलंकी अपना गिलास खाली कर देता है और उठकर सीढ़ियों के नीचे उतर जाता है। इरा बरामदे में ही खड़ी रह जाती है—अकेली। गीत गुनगुनाते हुए सोलंकी आगे निकल जाता है। फिर मुड़कर पीछे इरा की ओर देखता है। इरा की आंखों में सोलंकी के साथ चलने की आतुरता है। सोलंकी दूर से ही उस आतुरता को भांपकर उसे साथ आने का इशारा करता है। इरा जैसे आह्लादित होकर बरामदे से नीचे कूद जाती है और दौड़कर सोलंकी के साथ हो लेती है। सोलंकी के गीत का स्वर और ऊंचा हो जाता है। वे दूर निकलते जाते हैं।

तिलक लौटकर आता है और उन्हें जाते देख ठिठक जाता है। फिर धीमे कदमों से नीचे उतरता है। चार-छह कदम चलकर एक पेड़ के पास तक पहुंचता है। उससे टिककर खड़ा हो जाता है। फिर सिगरेट निकालकर सुलगाता है और जैसे शून्य में झांकने लगता है।

आसमान में बिजली कड़कने की आवाज़ आती है। अंधेरे में डूबा डाक बंगला एकाएक चमक जाता है।

तिलक शाल लपेटे कुर्सी पर बैठा है। घोड़ों की तेज़ टापों की आवाज़। बारिश की एक हलकी-सी फुहार गिरती है। बरामदा भीग जाता है। तिलक सिगरेट जलाने के लिए माचिस रगड़ता है कि तभी एक टार्च की तेज़ रोशनी बरामदे में सीढ़ियों के पास गिरती है।

दो पुरुष और दो महिलाएं घोड़ों से उतर चुके हैं। पुरुष अपनी-अपनी महिलाओं को सहारा दिए सीढ़ियां चढ़ते हैं। टार्च की रोशनी से उनमें से एक कमरे का खुला हुआ दरवाज़ा देखकर औरत को छोड़कर तिलक की ओर लपकता है। वह भी फौजी है।

पुरुष : (तिलक पर लाल होता हुआ) हू हैजे ओपंड दिस ? यू ? [किसने खोला ? तुमने ?] चौकीदार ! (चीखता है) ए चौकीदार का बच्चा ! ...

तभी इरा और सोलंकी बरामदे की सीढ़ियां चढ़ते हैं। सोलंकी आगे बढ़कर उस फौजी से कहता है :

सोलंकी : वाट मेक्स यू शाउट ? [आप चिल्ला क्यों रहे हैं ?]

पुरुष : वाट बुलशिट ! (एक-एक शब्द को चबा-चबाकर बोलता है) आई वांट टु नो हू'ज़ ओपण्ड दिस ! [मैं यह जानना चाहता हूं कि दरवाज़ा किसने खोला है !]

सोलंकी : मी। इट्स नाट योर पर्सनल काटेज ! इज़ इट ! [मैंने। यह आपका निजी घर तो नहीं है !]

पुरुष : नो ! बट यू डोंट लुक लाइक ए बर्गलर, मैन ! [आप कोई चोर-उचक्के तो दिखाई नहीं दे रहे !] (इरा को भीगा हुआ देखकर) यू शुड हैव वेटेड ! [आपको इंतज़ार करनी चाहिए थी !]

सोलंकी : आई लर्ट यू आर ए कैप्टेन इन द आर्मी। [मुझे पता चला था कि आप फौज में कप्तान हैं।]

पुरुष : सो वाट ! आई मे बी ऐन ऐस इन द आर्मी ! [तो इससे क्या ! मैं चाहे फौज में गधा होऊं!]

सोलंकी : आई लर्ट रांग देन, माइ डियर कैप्टेन। [माइ

डियर कैप्टन, तो फिर मुझे गलत पता चला था।]

पुरुष : आ राइट ! आ राइट··· हम लोग सिरफ सोना मांगता आज। हम उदर एक कमरा में सो जाएंगा सब लोग··· (थोड़ा शैतानी से मुस-कराकर) यू हैव द रूम··· [आप कमरा ले लें] (चलता है। फिर मुड़कर जोड़ता है) ऐंड द वेड टू ! ··· [और बिस्तर भी]

वे चारों दूसरे कमरे की तरफ चले जाते हैं। इरा बरामदे के किनारे पर आकर अपने बाल निचोड़ने लगती है। तिलक पास आ जाता है। सोलंकी कमरे में जाकर मोमबत्ती जलाता है। अपने कपड़े बदलता है। कपड़े बदलते-बद-लते सोने के इंतज़ाम के बारे में भी सोचता जाता है।

सोलंकी : (वहीं भीतर से) सोने का क्या इंतज़ाम किया जाए, इराजी ?

तिलक : मैंने अपना इंतज़ाम यहीं बरामदे में कर लिया है। (कुछ ऊंची आवाज़ में कहता है)

इरा तिलक को गौर से देखती है और धीरे से मुसकरा देती है। तिलक थोड़ा असहज महसूस करता है, फिर स्थिति को सहज बनाने के लिए कहता है :

तिलक : कपड़े बदल लो···सर्दी लग जाएगी···

इरा एक बार फिर उसकी ओर अर्थभरी नज़रों से देखती है और फिर बाल निचोड़ने लगती है।

रात काफी हो चुकी है। आसमान में ज्यादा बादल नहीं हैं और रह-रहकर उनके पीछे से चांद झांक जाता है।

कमरे में सोलंकी अपना होल्डाल बिछा-कर गहरी नींद सोया हुआ है। उसके खर्राटों

की आवाज आ रही है। बरामदे में तिलक का बिस्तर है, जो अंधेरे में दिखाई नहीं पड़ता। वह गर्दन तक कम्बल लपेटे लकड़ी की दीवार का सहारा लिए बैठा है। उस अंधेरे में सिर्फ उसकी सिगरेट का गुल एक जलती बूंद की तरह चमक रहा है। इरा कमरे के दरवाज़े के पास आकर बैठ जाती है। फिर धीरे से उसके सिर पर बालों को सहलाते हुए कहती है :

इरा : (इठलाकर) चलो न, नीचे चलें···

तिलक : नीचे कहां ?

इरा : बाहर···मैदान में···या और आगे जंगल में···

तिलक : या और आगे···

इरा : च् ! ···तुम नहीं समझोगे···(मनुहार से) आओ···चलो न ! ···

तिलक और इरा एक ही कम्बल में लिपटे चांदनी से भरे मैदान में उतर जाते हैं। वे एक-साथ चल रहे हैं कि इरा कंबल से निकलकर दौड़ती हुई आगे निकल जाती है—ढलान में उतरती हुई। पेड़ों के झुरमुट के बीच जाकर वह खड़ी हो जाती है और वहीं से बड़े ज़ोर से पुकारती है :

इरा : तिलक !

'तिलक' की प्रतिध्वनि गूंजती रहती है। तिलक आगे जाकर एक पत्थर पर बैठ जाता है। इरा पास के जंगल में लंबी-लंबी छायाओं के बीच घिरी खड़ी है। इस बार वह धीरे से पुकारती है—'तिलक'···आवाज़ जैसे पत्तियों पर कांपती रहती है। फिर वह एक झटके से तिलक की ओर मुड़ती है और एक क्षण तिलक को निहारती रहती है।

तिलक सिगरेट जला रहा है।

इरा उसे बड़ी-बड़ी आंखों से देखती हुई पूछती है :

इरा (सिमी) होस्टल में

इरा : (विमल के बारे में) समझ में नहीं आता कि आदमी सिर्फ पावरोटी खाकर ज़िंदा कैसे रह सकता है !

विमल (शुभेंदु चटर्जी)

शुरु-शुरु में जब वह इरा से मिलता है।

विमल : नाटक की दुनिया भी बड़ी अजीब है इराजी !

इरा (सिमी) होस्टल से घर लौटने के बाद

इरा अपने पिता ब्रिगेडियर वर्मा (इफ्तिखार) के सामने

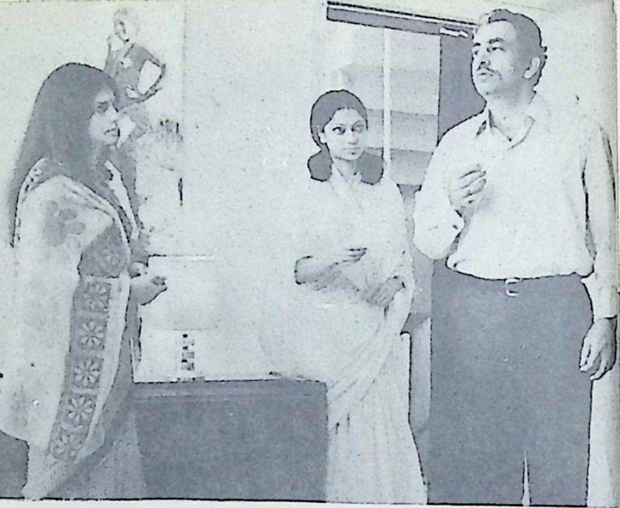

शीला (गीता), इरा (सिमी), और बतरा (नितिन सेठी)
तब जब इरा को शीला के बारे में कुछ भी पता न था।

शीला और बतरा का एक आत्मीय क्षण

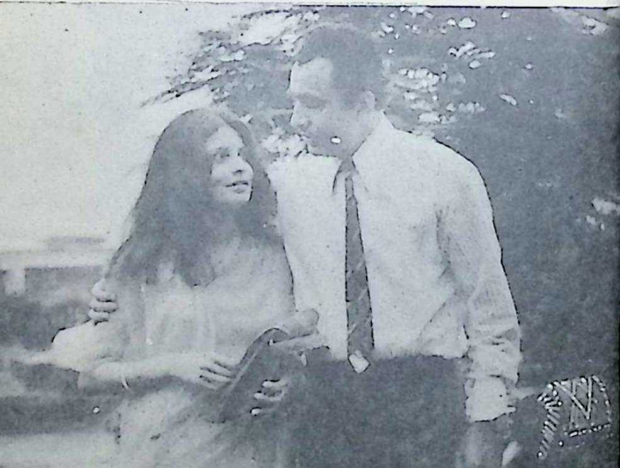

बतरा और इरा

बतरा : मेरा अकेलापन दोहरा है इरा ! मेरा दम घुटता है···
मुझे बचा लो इरा !

इरा और शीला बतरा के घर में
शीला : कल से आपकी नौकरी खत्म।

आसाम में डॉ० चन्द्रमोहन (भगवान साहू) और इरा
डॉ० : अब तो तुम मेरी बीवी हो।

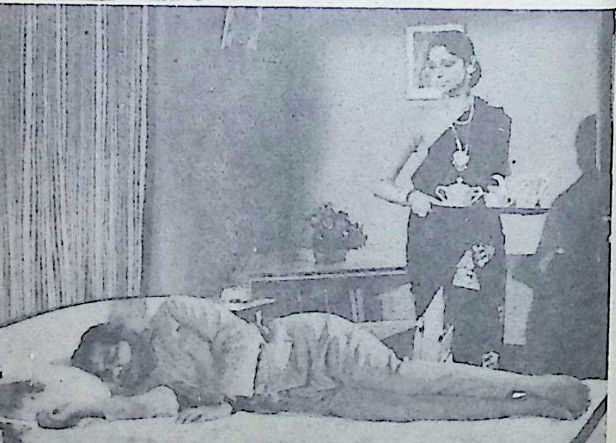

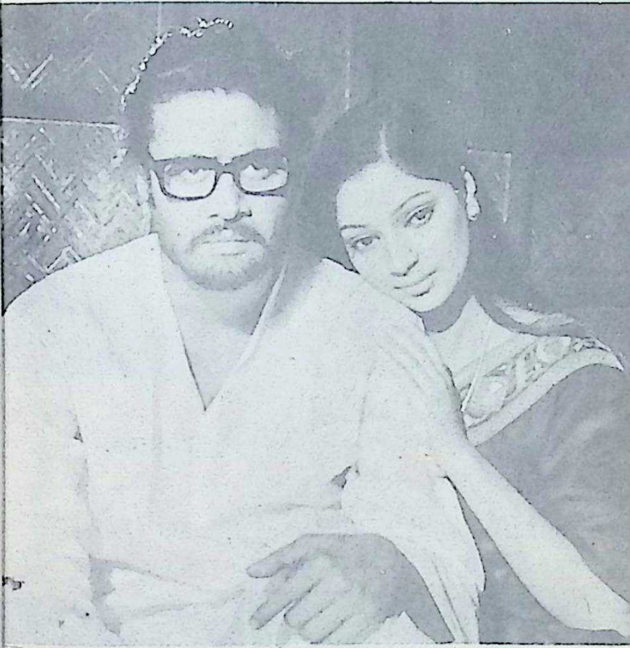

विमल (शुभेंदु चटर्जी) और इरा (सिमी)।
विमल जेल काटकर लौटा है।
विमल : अब मैं मिट जाने वाला शरीर नहीं, एक विचार हूं···दहकता हुआ विचार

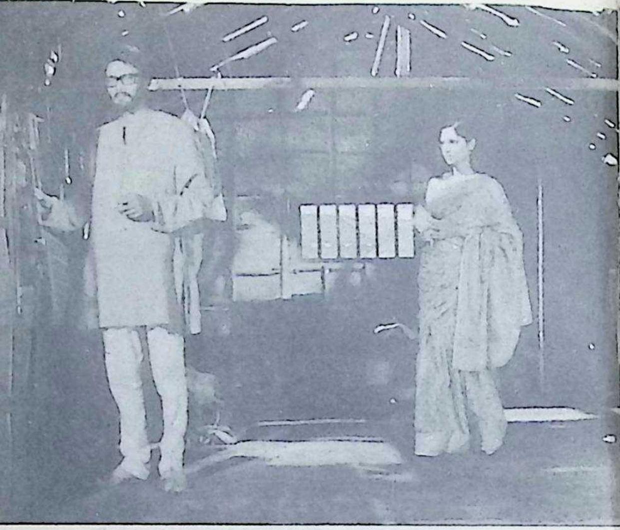

विमल के कमरे में इरा

विमल : नहीं, इरा, अब ज़िन्दगी यों ही नहीं जाएगी···

नीचे (बायें से) छायाकार नरिमन ईरानी, इरा (सिमी) और निर्देशक गिरीश रंजन विमल के घर के एक सेट पर

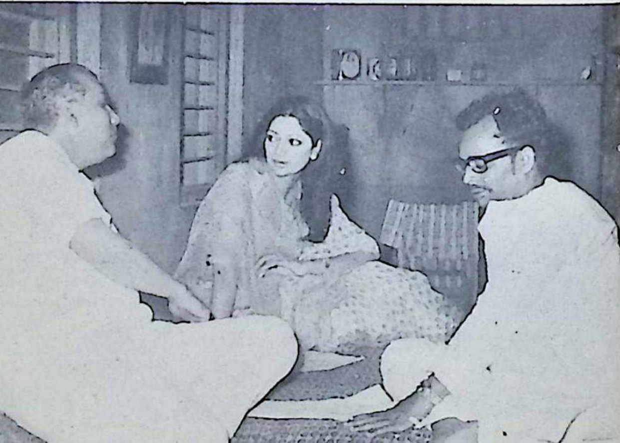

इरा : तुम मुझे कैसी औरत समझते हो, तिलक ?

तिलक एक पल इरा को विचलित दृष्टि से देखता रहता है। जैसे एकाएक इस प्रश्न के लिए तैयार न हो।

तिलक : क्या मतलब ?

इरा : मतलब तुम खूब समझ रहे हो !

तिलक : (धीरे से हंसकर बात टालना चाहता है) तुम्हारी इस बात का कोई मतलब नहीं है।··· सवेरे कोल्हाई चलना है, चलो, चलकर सो जाएं···

इरा : ऊं हूं ! अभी तो न मैं सोऊंगी, न तुम्हें सोने दूंगी।

तिलक : क्यों आखिर ?

इरा : इसलिए कि अभी तुम झूठ का सहारा ले रहे हो···यह क्या बात है, तिलक, तुम लोग झूठ से बाहर क्यों नहीं निकल पाते ?

तिलक : तुम लोग···मतलब ?

इरा : तुम क्या सोचते हो तिलक, क्या मेरी जिन्दगी में आने वाले तुम पहले पुरुष हो ?

तिलक उसके चेहरे की तरफ देखता है।

इरा तिलक से दूर सपाट मैदान की ओर बढ़ने लगती है। दूर एक लम्बे-से पेड़ के पास जाकर वह चारों ओर निहारने लगती है। सामने कमल-फूलों से भरी झील है। कमल की पंखुरियों पर पानी की बूंदें पारे की तरह थरथरा रही हैं। इरा उनसे खेलने लगती है।

तिलक उसके पास आ जाता है और पूछता है :

तिलक : ये, सोलंकी साहब कौन हैं ?

इरा जैसे उसके भाव को हलके मजाक के लहजे में ताड़ती है।

इरा : हैं एक साहब···क्यों ? उसका इस तरह मिल जाना तुम्हें···(बात को प्रश्नवाचक बनाकर

तोड़ देती है)

तिलक : नहीं, ऐसी तो कोई बात नहीं···

इरा : (मुसकराकर) जैसे दिल्ली में तुमसे अचानक मुलाकात हो गई, उसी तरह बतरा ने अचानक ही एक दिन उससे मिलाया था···

तिलक : हूं। (गहरे भाव से)

इरा : हां। (सहज भाव से) अब आज बरसों बाद मुलाकात हुई है···

तिलक : ओह! तो पुरानी मुलाकात है!

इरा : इससे क्या फरक पड़ता है तिलक···छोड़ो इस बात को। आज बहुत-सी बातें याद आ रही हैं···

तिलक : बातें···

इरा उठ पड़ती है और फिर से पेड़ों के बीच जा खड़ी होती है। फिर जैसे व्याकुल-सी होकर आवाज़ लगाती है—विमल!! प्रतिध्वनि गूंजती रहती है। फिर वह घूमकर दूसरी बार पुकारती है—बतरा!! प्रतिध्वनि फिर गूंजती रहती है। इरा फिर घूमती है और तीसरी बार पुकारती है—डाक्टर!!! यह शब्द भी प्रतिध्वनित होता रहता है। अन्त में इरा धीरे-धीरे अपने-आपको कम्पोज़ करने के प्रयत्न में अपने-आपमें गुम होती जाती है और जैसे खुद ही से बोलती जाती है :

इरा : आवाज़ों की आत्माएं अभी भी मेरे चारों ओर भटक रही हैं, तिलक!···मैं महज़ प्यार के लिए प्यार कभी नहीं कर पाई। निरर्थक प्यार विलास लगता है मुझे। और यह विलास सभीने किया है मेरे साथ···बड़ी-बड़ी बातें चाहे जितनी गढ़ ली जाएं···पर प्यार सब कुछ चाहता है···एक पूरी दुनिया···एक पूरा आदमी···भावनाओं का एक पूरा संसार··· लेकिन कहां है वह पूरा आदमी, वह पूरी

दुनिया, वह पूरा संसार ? ...ओह...प्यार! ...

फ्लैश बैक

एक खासा खूबसूरत ड्राइंगरूम। चारों तरफ खामोशी है। ऐसा लगता है जैसे घर में कोई न हो। कुछ देर के बाद सीढ़ियों पर भारी कदमों से किसीके उतरने की आवाज़ आती है। दूर बैठी इरा उठ खड़ी होती है। आने वाले चालीस की उम्र के आसपास के व्यक्ति का नाम है हेमेन्द्र बतरा।

बतरा नाइट गाउन पहने इरा के पास आकर खड़ा हो जाता है। इरा उठकर अभिवादन करती है। खड़े-खड़े ही बतरा इरा से कहता है :

बतरा : हां, विमल साहब ने भेजा है न ?

इरा : (धीरे से) जी।

बतरा : बैठिए...

इरा बैठ जाती है।

बगल वाली बालकनी की ओर बढ़कर बतरा दरवाज़ा खोलता है और सामने पड़े अखबारों में से एक उठा लेता है। अखबार खोलकर उसपर इधर-उधर नज़र दौड़ाते हुए वह पूछता है :

बतरा : विमल साहब किस ड्रामे में मशगूल हैं इन दिनों ?

इरा : जी...पैसे ही नहीं हैं तो प्ले कैसे होगा ! ...

बतरा : हूं...

एक अजीब-सी चुप्पी।

बतरा : आप भी तो विमल के साथ ही हैं न स्टेज पर ?

इरा : जी हां, यूनिवर्सिटी के बाद से ही...

बतरा : ओ ! ...

दूर पेलमेट पर से परदा खिसकाने की

आवाज़ आती है। ट्राली पर चाय का सामान लिए घर का नौकर रामजी आता है और सोफे के सामने वाली मेज़ पर करीने से सामान लगाकर चला जाता है। बतरा भीतर लौटता है—मेज़ के पास। चाय की ओर इशारा करके कहता है :

बतरा : लीजिए···

बतरा की नज़र अभी भी अखबार पर ही है।

इरा चाय बनाने लगती है। एक प्याला वह बतरा की ओर बढ़ा देती है। फिर अपने लिए चाय बनाती है।

चाय की चुस्की लेते हुए बतरा कहता है :

बतरा : कब से जायन करना चाहती हैं ?

इरा : जी, जब से आप कहिए···लेकिन काम क्या होगा ?

इसी बीच टेलीफोन की घंटी बज उठती है। बतरा चाय की प्याली लिए-लिए ही टेलीफोन की ओर बढ़ जाता है।

बतरा : (इरा से) जस्ट ए मिनट। (टेलीफोन पर) यस···बतरा स्पीकिंग···जी हां, मालूम है मुझे···हां···वह हो जाएगा···आइ नो··· जी हां···मुझे मालूम है···हां···आ गए हैं··· आप बिलकुल फिक्र न करें···अच्छा··· (आकर इरा के सामने फिर बैठ जाता है)

इरा की आंखों में अभी तक अपना सवाल है। बतरा कहता है, जैसे उसकी बात का उत्तर देते हुए :

बतरा : यही काम होगा आपका···मेरे फोन रिसीव करना·· दो घंटे सुबह, दो घंटे शाम। मैसेजेज़ लेना, नाम नोट करना और उन्हें मेरी मेज़ तक पहुंचा देना—बस !

इरा उठ खड़ी होती है।

इरा : तो मैं···कल से···

बतरा : ठीक है। कल से आ जाइए···

इरा : तो अब चलती हूं···

इरा चलने के लिए मुड़ती है। ड्राइंग-रूम से निकलकर वह पोर्टिको के पास आती है कि बतरा की आवाज़ सुनाई पड़ती है :

बतरा : आपकी सैलरी की बात विमल साहब तय कर गए हैं···

फ्लैश बैक समाप्त

फ्लैश बैक

रात के समय विमल अन्दर से अपने कमरे का दरवाज़ा खोलता है। पाजामा और बनियान पहने लम्बे छरहरे बदन का, तेजस्वी-सा दिखने वाला युवक विमल। लायब्रेरी फ्रेम का चश्मा लगाए। हाथ में जयशंकरप्रसाद का 'चन्द्रगुप्त' नाटक लिए हुए। इरा दरवाज़े के बाहर खड़ी है। विमल बिना कुछ बोले या चेहरे पर किसी तरह का भाव लाए तख्त पर जाकर लेट जाता है और नाटक पढ़ने लगता है।

साधारण-सा कमरा। काफी अस्त-व्यस्त। किताबों-कागज़ों से भरा हुआ। कोने की मेज़ पर तमाम फाइलें और मेकअप का बाक्स भी पड़ा है। पत्रिकाओं के ढेर। तख्त, जिसपर विमल लेटा है, बड़ा-सा है, जिसपर सिरहाने की जगह पर लिपटा हुआ बिस्तर पड़ा है। पास में एक छोटी मेज़, बिना हत्थों की एक कुर्सी और एक स्टूल। इरा और विमल दोनों के कपड़े इधर-उधर बिखरे हैं।

इरा बिना हत्थों की कुर्सी पर बैठ जाती

है। उसका चेहरा पसीने से तर हो रहा है
आंचल से गर्दन पोंछती हुई वह ऊपर छत क
ओर देखती है, तो वहां पंखे की बजाय, नंगा
खुला हुआ तार लटकता दिखाई देता है। इस
पहले कि इरा कुछ पूछे…

विमल : ले गया…

इरा कुछ नहीं बोलती। उठकर बाथरू
की तरफ चली जाती है। थोड़ी देर बाद व
हाथ-मुंह धोकर तौलिये से चेहरा पोंछते हु
बाहर आती है। विमल कहता है :

विमल : खाना रखा है, खा लो…

इरा सीधे मेज़ के पास जाती है और अख
बार हटाकर खाने की थाली देखती है। थाल
में कुछ रोटियां, थोड़ी-सी सब्ज़ी और दा
की एक कटोरी के साथ कुछ प्याज-व्याज रख
है। इरा और थाली के बीच दो-तीन इंटर
कट्स होते हैं। (पृष्ठभूमि में संतूर के स्वर उभ
रते हैं—धीरे-धीरे, और इरा को अपनी पिछल
जिन्दगी की एक घटना याद आ जाती है)

फ्लैश बैक समाप्त

फ्लैश बैक

इरा रात के समय अपने पिता के घर
ड्राइंगरूम में बैठी है। एक लम्बी डाइनि
टेबल। इरा कुलीन और धनी घर की बे
की तरह शान-शौकत में सजी बैठी है। इरा
पिता ब्रिगेडियर वर्मा भी साथ बैठे खाना
रहे हैं। दो-चार चम्मच सूप लेकर इरा सू
प्लेट सरका देती है। बेयरा उसे हटाकर दूस
प्लेट लगा देता है। इरा कुछ खाने की ची
प्लेट में लेती है। फिर कांटा उठाती है
ब्रिगेडियर वर्मा इरा से कहते हैं :

ब्रि० वर्मा : कालेज में मैंने तुम्हें पढ़ने के लिए भेजा है—नाटक करने के लिए नहीं ! बार-बार मना करने के बावजूद तुम मनमानी करती आ रही हो। यह तमाशा बन्द न हुआ तो मुझे जबरन तुम्हारी पढ़ाई बन्द करनी पड़ेगी । छोड़ो होस्टेल-वोस्टेल और घर पर बैठो !

इरा एक नज़र पिता की ओर देखती है, फिर खाने लगती है ।

ब्रि० वर्मा : तुम्हारी मां होती तो वह भी यही कहती जो मैं कह रहा हूं।···लगता है, इस छोकरे ने तुम्हारा दिमाग खराब कर दिया है !

इरा खामोश रहती है।

ब्रि० वर्मा : कुछ बोलती क्यों नहीं ? तुम अब बच्ची नहीं हो कि अपना भला-बुरा भी न सोच सको ! ··· जो आदमी पढ़ाई की फीस तक नहीं दे सकता, वह तुम्हारा भार क्या संभालेगा !

इरा खामोश ।

ब्रि० वर्मा : पढ़-लिख लो। एम० ए० की डिग्री ले लो। उसके बाद जो जी में आए, करो।···इस तरह के इनफैचुएशन का एक ही नतीजा हुआ करता है—फ्रस्ट्रेशन, एंड नथिंग एलस।

इरा नैपकिन से मुंह पोंछकर उठ पड़ती है।

फ्लैश बैक समाप्त

विमल का कमरा। रात।

इरा खाने को ढक देती है। पानी का गिलास उठाती है और पानी पी जाती है। साड़ी के आंचल से मुंह पोंछकर विमल के पास जाकर लेट जाती है। उसका मुंह दूसरी ओर है।

विमल किताब पढ़ता रहता है। बगल में इरा के आकर लेटने का एहसास होते ही वह बत्ती बुझा देता है।

बतरा का कमरा। टेलीफोन की घंटी वज रही है। इरा रिसीवर उठाती है।

इरा : (रिसीवर में) जी मैं बतरा साहब की सेक्रेटरी बोल रही हूं···यस सर···जी नहीं···मैं बता दूंगी···जी हां···नमस्ते···(फोन रख देती है)

सामने रखे पैड पर इरा काल नोट करती है। रामजी ग्राता है। उसके पास एक प्याला चाय रख देता है, जैसे यह हमेशा का नियम हो। उसी ट्रे में कुछ पत्रिकाएं हैं, जिन्हें वह इरा को देता है।

रामजी : साहब ग्रापके लिए दे गए हैं···

इरा : (जैसे उपकार मानते हुए) ग्रो···ग्रच्छा··· (पत्रिकाएं लेकर सामने रख देती है)

इरा पत्रिकाएं पलटने लगती है कि फोन की घंटी फिर बजती है। वह रिसीव करती है ग्रौर पैड पर नोट भी करती जाती है :

इरा : यस···जी। मिस्टर नरसिंह राव रेड्डी··· ग्रो० के० सर···ग्राइ होप इट विल बी डन इन ए वीक्स टाइम···यस्टरडे ही फोंड ग्रप द सेक्रेटरी···ही हैड पाज़िटिव टाक्स···यस सर··· थैंक्यू सर···

इसी समय पोर्टिको में गाड़ी रुकने की ग्रावाज ग्राती है ग्रौर कार की हैडलाइट की रोशनी तीर की तरह घूमकर बुझ जाती है। रामजी बाहर लपकता है। घड़ी साढ़े ग्राठ बजाती है। बतरा भीतर ग्राता है। वह ग्रस्त-व्यस्त है, जैसे भीतर से परेशान, फिर भी ग्रपने को संभाले हुए है। वह भीतर ग्राकर एक क्षण ग्रनिश्चय में इरा के पास ठिठकता है। इरा खड़ी हो जाती है। उसे कागज़ देने को होती है, फिर जैसे कुछ न समझकर खुद ही बताने लगती है :

इरा : मिस्टर उदेशी ने कहा है कि···(कागज़ की

ओर देखती है)

फोन फिर बज उठता है। इरा उठाने को होती है कि बतरा खुद उठा लेता है। वह उखड़ी-उखड़ी बातें करता है :

बतरा : यस···गुड ईवनिंग···जी···जी हां···फाइनल तो सिर्फ मौत ही है, साहब ! जी···मैं पूरी कोशिश कर रहा हूं, देखिए···हां···हां··· आप इत्मीनान रख सकें तो अच्छा है···

बात खत्म करके बतरा इरा को इशारा करता है कि बताए कि उदेशी ने क्या कहा है।

इरा : मिस्टर उदेशी ने कहा है कि फाइल मिनिस्टर साहब के पास···

बतरा : ठीक है···(उखड़े भाव से) मिनिस्टर साहब के पास···लीव इट···

बतरा टाई की गांठ खोलता हुआ सीढ़ियां चढ़कर अपने कमरे में चला जाता है। दर-वाज़ा ज़रा ज़ोर से बन्द होता है। फिर खुलता है। बतरा वहीं से आवाज़ लगाता है :

बतरा : रामजी ! सोडा !···

वह कमरे में घुसता है और फौरन बाद उसके कमरे से रिकार्ड-प्लेयर पर संगीत की तेज़ आवाज़ उभरती है। इरा कागज़ लिए हुए सीढ़ियों के पास ठिठक जाती है। तभी बतरा फिर आधा दरवाज़ा खोलता है। संगीत की तेज आवाज़ आती है। बतरा आवाज़ लगाता है :

बतरा : रामजी ! (फिर इरा को नीचे खड़ा देखकर इशारा करते हुए कि वह कागज़ अपनी मेज़ पर ही रख दे) वहीं रख दो, मैं देख लूंगा।

इरा : जी अच्छा···तो मैं अब जाऊं ?···

बतरा : ठीक है।

संगीत में अब बोल उभरने लगे हैं। एक गज़ल है :

शहर की रात और मैं नाशादो-नाकारा फिरूं
जगमगाती जागती सड़कों पै आवारा फिरूं
गैर की बस्ती है कब तक दर-बदर मारा फिरूं
ए गमे दिल क्या करूं, ए वहशते दिल क्या करूं।

इरा अपना पर्स और एकाध पत्रिकाएं लेकर चलने लगती है। इशारे से वह दरवाज़ा बन्द कर लेने की बात कहती है। रामजी भी इशारे से हां कहकर किचन की ओर भागा चला जाता है।

गेट के पास आकर इरा ऊपरी मंज़िल की ओर देखती है। बड़े-से शीशे के पास एक छाया (बतरा की) इधर-उधर चक्कर काट रही है। वह चुपचाप वापस लौटती है। ड्राइंगरूम में आती है। अपना भूला हुआ छाता उठाती है। एक नज़र बतरा के कमरे की ओर डालती है। दरवाज़ा आधा खुला हुआ है। संगीत अब रुक ही रहा है कि उसी के साथ एक आवाज़ आती है :

बतरा : ओ गाड ! ओ गाड !

एक क्षण तक तकलीफदेह असमंजस में रुककर इरा धीरे-धीरे चली जाती है। फाटक पार करके पतली सड़क के उस पार बस-स्टॉप पर खड़ी हो जाती है, जहां से बतरा का कमरा नज़र आता है। वह कैद परछाईं अब भी उसी तरह छटपटा रही है। उसके दोनों हाथ शीशे के उस पार शीशे पर ही टिके हुए हैं—हाथ कुछ साफ नज़र आते हैं। शेष शरीर छाया की तरह दिखाई देता है।

बस स्टॉप पर खड़े-खड़े वह अपने दाहिनी ओर एक और छाया महसूस करती है। बिना शक उधर देखती है···कि वह छाया एक बंगले की चारदीवारी के पीछे दुबक जाती है। बस नहीं आ रही है। बतरा का कमरा अंधेरा

हो गया है। इरा चुपचाप (बस का इंतजार करना छोड़कर) पैदल ही चल देती है। एक बार फिर वह महसूस करती है कि कुछ दूर पर कोई आ रहा है। वह चप्पल ठीक करने के बहाने झुकती है और देखती है कि वह विमल ही है। वह अगले बस-स्टॉप पर रुक जाती है कि शायद विमल आ जाए, पर वह छिपकर किसी और तरफ चला गया है। बस आती है और इरा उसमें बैठ चली जाती है।

विमल का कमरा। रात। कमरे में सीखचों वाली खिड़की। इरा छड़ें पकड़े तन्मय होकर कहीं देख रही है। उसने कोने में स्टोव जलाकर पानी चढ़ा दिया है, चाय के लिए। स्टोव की आवाज़ आती रहती है।

सहसा उसकी नजर सामने की दीवार पर लगे एक पोस्टर पर जाती है। पोस्टर में 'शाकुंतल' का विज्ञापन है।

विमल का कमरा। रात। दरवाज़े पर दस्तक। इरा अभी तक बेध्यानी में खोई है। दरवाज़े पर दोबारा दस्तक।

इरा खिड़की से हटती है। आंचल से अपनी भीग आई आंखों को सोखती है और बढ़कर दरवाजा खोल देती है। सामने थका-मांदा विमल खड़ा है।

विमल : कहां खोई हुई थीं ? कब से कुंडी खटखटा रहा हूं !

इरा : हू ?

विमल : खाना है कुछ ?

इरा उसकी ओर देखती है। फिर कोने में रखे स्टोव की ओर चली जाती है और चुपचाप चाय बनाने लगती है। विमल आकर

कुर्सी पर बैठ जाता है। फिर एक झटके से उठता है और तौलिया उठाकर बाथरूम में चला जाता है।

इरा चाय का प्याला लाकर मेज पर रख देती है। विमल बाथरूम से लौटता है। चुपचाप आकर बैठ जाता है। चाय का एक घूंट भरता है।

इरा विमल को देखकर कहती है :

इरा : ब्रेड में चींटियां लग गई थीं—उसे फेंक दिया। पैसे तो मेरे पास भी नहीं थे विमल, और बतरा साहब से एडवांस मांगने में शर्म आती है।

विमल : मैं तुमसे कैफियत नहीं मांग रहा हूं—'हां' और 'ना' में जवाब दो।

विमल चाय की खाली प्याली इरा की ओर बढ़ा देता है। इरा उदास-सी उसे टेबल पर ले जाकर रख देती है। विमल सिगरेट जलाकर एक किताब उठा लेता है।

इरा उसके पास आकर बैठ जाती है और पूछती है :

इरा : कहां गए थे ?

विमल : तेजपाल।

विमल चाय का प्याला उठा लेता है। कहता कुछ नहीं।

इरा : क्यों अपने को सताते हो, विमल ! क्या मुझे ये सब अच्छा लगता है ? तुमने कभी सोचा है, मेरे दिल पर क्या बीतती है ? क्या आज तक मैं वही नहीं करती आई हूं जो तुमने मुझसे कहा है ?···तुमने कहा—इरा, नाटक में ही मुक्ति है। मैंने कहा—हां। तुमने कहा—आओ, सपने देखें। मैंने सपने देखे। तुमने कहा—यह ज़िन्दगी बहुत तकलीफदेह है; इसे जीना सीखो। मैंने कहा—अच्छा। तुमने कहा—नौकरी कर लो। मैंने कहा—ठीक है।

वह भी कर ली। अब और मैं क्या करूं, विमल!...तुम तो खुद ही संदेह और संशय के अंधेरों में डूबते जा रहे हो!...

विमल जैसे भीतरी तकलीफ से अकुलाकर उठ खड़ा होता है। उसमें जैसे इतनी ताकत नहीं है कि इरा का सामना कर सके।

इरा विमल की ओर देखती है। उसकी आंखें डबडबाई हुई हैं। विमल अब भी उसकी ओर नहीं देखता।

इरा : सब कुछ इतनी जल्दी बिखर जाएगा, इसका अंदाज़ ही नहीं था...

इरा फिर विमल की ओर देखती है। उसके आंसू फिर पिघल आए हैं। होंठ दबाकर वह उन्हें पी जाना चाहती है।

बतरा का घर। रात। बाहर बारिश हो रही है। बतरा की गाड़ी पोर्टिको में आकर लगती है। बतरा भीतर आता है और सीधे इरा के पास आकर रुक जाता है।

बतरा : कोई फोन था?

इरा राइटिंग-पैड बतरा की ओर बढ़ा देती है। बतरा एक नज़र पैड की ओर देखता है और फिर कहता है:

बतरा : इसे मेरे कमरे की मेज़ पर लगा दो।

बतरा सीढ़ियों से होता हुआ अपने कमरे में चला जाता है। इरा एक क्षण के लिए खड़ी रह जाती है और फिर धीरे-धीरे सीढ़ियां चढ़ने लगती है।

कमरे का दरवाज़ा खुला है और भीतर बतरा एक बड़े से आईने के सामने खड़ा अपनी टाई खोल रहा है।

इरा भीतर जाती है और दरवाज़े के पास ही जो मेज़ रखी है, उसपर पैड रखकर खड़ी

हो जाती है। इरा का प्रतिबिंब सामने शीशे में पड़ रहा है। बतरा आईने में देखते हुए ही कहता है :

बतरा : नीचे मेरा इंतज़ार करो। जाने लगो तो मुझसे पूछ लेना। हो सकता है कुछ देर तुम्हें रुकना पड़।

इरा नीचे आकर सोफे पर बैठ जाती है। बतरा के कमरे से फिर वही पुराना रिकार्ड बजने की आवाज़ आने लगती है।

इरा वहां से उठकर बाहर लॉन में चली आती है। खिड़की के शीशों पर बतरा की परछाईं पड़ रही है और वह तेज़ कदमों से इधर से उधर चलता दिखाई देता है। शीशे पर पड़ने वाली उसकी छाया कभी बड़ी और कभी छोटी होती दिखाई देती है। बीच-बीच में उसके शब्द—'ओ गाड ! ओ गाड !'—भी सुनाई देते रहते हैं।

कहीं दूर से टन-टन कर नौ बजने की आवाज़ आती है।

इरा उठ जाती है। इसके साथ ही बाहर के बरामदे की रोशनी जलती है और बतरा बाहर आता है।

बतरा : यहां आना ज़रा।

इरा ड्राइंगरूम से होती हुई सीढ़ियां चढ़ने लगती है और फिर बतरा के कमरे में जा पहुंचती है। बतरा की मेज़ पर आधा खाली शराब का गिलास रखा है और वह स्वयं दीवार पर लगी एक तसवीर के सामने खड़ा है।

बतरा : (तसवीर की ओर इशारा करके) इसे देखो।

इरा बतरा के पीछे जाकर खड़ी हो जाती है और तसवीर देखने लगती है। फिर मुसकराकर कहती है :

इरा : मिसेज़ वतरा ! ...

वतरा ठठाकर हंस पड़ता है ।

वतरा : ओ गाड ! ओ गाड ! क्या वकती हो !

इरा की मुसकान सिमट जाती है। वतरा बढ़कर शराब का गिलास उठा लेता है और खिड़की के पास जाकर खड़ा हो जाता है।

वतरा : मुझे नहीं मालूम, यह तसवीर किसकी है। पार्टीशन के दिनों जब रावलपिंडी से भागा था तो कत्ल हुए लोगों के बीच यह पड़ी थी... मैंने इसे देखा और देखता ही रह गया... (साथ में शराव का गिलास लिए वह तसवीर के पास आकर खड़ा हो जाता है)

इसका फ्रेम सोने का है, यह यहां आकर पता चला। मालूम नहीं लाने वाला इसे फ्रेम के लिए ला रहा था या तसवीर के लिए।

वतरा शराब का एक घूंट पीता है और फिर तसवीर की ओर देखते हुए कहता है :

वतरा : यह मेरे पंजाव की तसवीर है। यह मेरी मां से भी बहुत मिलती है। बीवी से भी...बहन से भी...

एक क्षण के लिए वह चुप रहता है। फिर शेष बची शराव को गले में उंड़ेलकर वह बात पूरी करता है...

वतरा : और तुमसे भी...

विमल का कमरा। रात। लैंप-पोस्ट की भीतर आती रोशनी में इरा देखती है कि स्टूल पर एक कागज़ पेपरवेट से दबा हुआ रखा है। इरा अपना पर्स एक ओर पटककर कागज़ को जल्दी से उठा लेती है। उसे पढ़ती है :

इरा, मैं इस ज़िंदगी और इस जगह से परेशान हो गया हूं। तुम्हें कहने को मेरे पास कुछ भी नहीं है इरा ! मुझे लगता रहा है मैं और तुम

ज़िंदगी में वक्त से पहले मिल गए हैं—थोड़ा पहले। मैं जीत चुका होता तब हम मिलते या पूरी तरह हार चुका होता। मैं अपनी जीत या हार कुछ तो तुम्हें दे सकता। इस वक्त क्या रह गया है मेरे पास ! संदेह, खालीपन, पछतावा···

पढ़ते-पढ़ते ही इरा की आंखें डबडबा जाती हैं। वह पस्त-सी होकर पत्र को स्टूल पर ही वापस डाल देती है। हवा का एक झोंका आता है। पत्र उड़ता है और खिड़की की छड़ों पर जाकर अटक जाता है और फड़फड़ाता रहता है, फिर बाहर गिर पड़ता है। इरा खिड़की की ओर बढ़ती है और सलाखें पकड़कर उनके पार देखती रहती है। उसकी आंखें जैसे खाली हो गई हैं।

बतरा का घर। दिन। दरवाज़ा बंद है। वाहर से कार के हॉर्न की आवाज़ आती है। रामजी भागकर जाता है और दरवाज़ा खोल देता है।

बतरा भीतर आता है और सीढ़ियों की ओर बढ़ता है। रामजी को वह कहता है :

बतरा : रामजी ! एक गिलास पानी···

सीढ़ियां चढ़कर बतरा अपने कमरे में चला जाता है।

मेज़ पर रखी फोन-काल्स की सूची वह सरसरी तौर पर देख जाता है। रामजी एक ट्रे में पानी का गिलास लिए हुए उपस्थित होता है। पानी पीकर बतरा गिलास को ट्रे पर वापस रख देता है, ट्रे में आज की आई हुई डाक भी रखी है। बतरा उसे उठा लेता है। कई चिट्ठियां वह बिना पढ़े ही फेंकता जाता है; एकाध को खोलकर रख लेता है। एक

लिफाफे को देखकर वह ठिठक जाता है। उसे उलट-पलटकर देखता है। फिर उसे हाथ में लिए वह कमरे से बाहर निकल जाता है।

बरामदा पार करके अपने कमरे के ठीक सामने वाले कमरे के सामने वह रुक जाता है और बंद दरवाज़े पर दस्तक देता है। भीतर से इरा दरवाज़ा खोलकर खड़ी हो जाती है।

बतरा : तुम्हारी चिट्ठी।

इरा : ओ···

इरा पत्र हाथ में ले लेती है। बतरा कमरे के अंदर चला जाता है। कमरे को एक नज़र देखकर फिर इरा की ओर देखते हुए वह कहता है :

बतरा : मुझे पता ही नहीं था यह कमरा इतना खूबसूरत है !

इरा पत्र पढ़ रही है। वह सिर्फ मुसकराती है।

बतरा : किसका खत है ? विमल साहब का ?

इरा : जी नहीं, मेरी एक सहेली है दमयंती, उसीका है।

तभी बाहर किसी गाड़ी के रुकने की आवाज़ आती है। बतरा कमरे से निकलकर बाहर बरामदे में आता है और बाहर देखता है। इरा भी पीछे-पीछे चली आती है।

टैक्सी खड़ी है और एक खूबसूरत-सी भद्र महिला गाड़ी का किराया चुकता कर रही है।

बतरा तेज़ी से सीढ़ियां उतरता हुआ नीचे चला जाता है।

बतरा : (द्वार पर पहुंचकर) अरे शीला, तुम !

शीला : मैंने सोचा सरप्राइज़ दूं।···

बतरा आगे बढ़कर शीला को अपनी बांहों में भर लेता है और दोनों वापस घर में प्रवेश करते हैं।

इरा कमरे में लौट जाती है और ड्रेसिंग टेबल के सामने बैठकर पत्र पढ़ने लगती है :

इरा डीयर,

मैंने घर-परिवार सब कुछ खोया। तूने भी तो विमल के लिए ही सब कुछ खोया… पर पगली, वही तो खोएगा जिसके पास कुछ होगा। हम मलाल क्यों करें, पछताएं क्यों ? जो है वह है, जो नहीं है वह नही है। जिन्दगी में जो नहीं है, वह नहीं है। उसके अलावा भी तो बहुत कुछ है। यह तो जिंदगी की धार में उतरने पर ही मालूम होता है।

कभी छुट्टी मिल सके तो भाग आ न—नागपुर !

—दमयंती

बाहर सीढ़ियों पर बतरा और शीला की खिलखिलाहट की आवाज़ आ रही है। इरा उठती है और जाकर पलंग पर लेट जाती है। लेटे-लेटे ही खिड़की के परदे को थोड़ा-सा सरकाकर वह देखती है। बतरा शीला को अपनी बांहों का सहारा देते हुए अपने कमरे में ले जाता है।

इरा परदे को फिर सरका देती है और चित होकर लेट जाती है। दूसरे कमरे से हंसी और खिलखिलाहट की आवाज़ आती रहती है।

इरा का कमरा। सुबह। दरवाज़े पर दस्तक होती है।

इरा घबराकर उठती है और दरवाज़ा खोलती है। सामने रामजी खड़ा है।

रामजी : साहब नीचे बुला रहे हैं…

इरा : मुझे ?…इस वक्त !

रामजी : जी। चाय के लिए…

इरा : नहीं, मुझे नहीं… (बतरा के कमरे की तरफ इशारा करके) उन्हें…

रामजी : वो तो नीचे ही हैं।...
इरा : अच्छा...चलो, मैं आती हूं...

बतरा का डाइनिंग कम-ड्राइंगरूम। सुबह। टी-पॉट से चाय उंडेली जा रही है। बतरा और शीला एक-दूसरे के सामने मेज़ पर बैठे हैं। बतरा इरा को देखकर कहता है :

बतरा : आइए, आइए, इराजी...इनसे मिलिए—मेरी वाइफ शीला...और शीला, यह हैं मिस इरा, मेरी असिस्टेंट...

शीला और इरा एक-दूसरे को नमस्कार करती हैं। इरा एक कुर्सी खींचकर शीला के पास ही बैठ जाती है।

इरा : (बतरा से) आपने बताया ही नहीं, मैं स्टेशन जाकर इन्हें रिसीव करती...

बतरा अट्टहास कर उठता है।

बतरा : अरे भई, हमें तो खुद खबर नहीं थी कि यह आ रही हैं...

बतरा और इरा एक-दूसरे की ओर देखकर मुसकराते हैं। शीला चाय की प्याली इरा की ओर बढ़ा देती है। कुछ-कुछ अजनबी महसूस करती इरा चाय पीने लगती है। पास ही पड़ी बिस्किट्स की प्लेट की ओर इशारा करते हुए शीला कहती है :

शीला : आप तो कुछ ले ही नहीं रहीं...

इरा : (जैसे अपने-आपमें लौटते हुए) हूं।...आप लीजिए, मैं ले रही हूं...(एक बिस्किट लेकर कुतरने लगती है)

बतरा : (इरा के संकोच को लक्ष्य करके, मुसकराते हुए) महीनों हो गए इराजी को यहां काम करते, फिर भी इनकी झिझक अभी तक बरकरार है।

इरा संकोच से सिमट जाती है।

शीला : गलती तुम्हारी है। तुम तो सबसे वेगानों जैस बर्ताव करते हो।

बतरा : वाह ! खूब कही तुमने !

शीला : जब इतने दिनों तक तुमने मेरी खोज-खब नहीं ली, तो फिर इन्हें तो यही गम सता र होगा कि यह तुम्हारे यहां नौकरी करती हैं··· क्यों, इराजी ?···

बतरा : मेरी क्या हालत रहती है, यह तो इराजी हं तुम्हें बता सकती हैं। सुबह का निकला रा को घर लौटता हूं···

शीला : और खूब शराब पीता हूं···

बतरा : तुम्हारे गम में···

बतरा खुली हंसी हंसता है। चाय क अन्तिम चुस्की लेकर वह उठ खड़ा होता है।

शीला : अब के गए कब लौटोगे ? रात के दो बजे ! क्यों ?···(प्यार से बतरा की ओर देखती है)

बतरा : आठ-साढ़े आठ। राइट ?

शीला : फिर वही बात ! शाम के पांच बजे तक आ वापस आएंगे और मेरे साथ शापिंग के लि चलेंगे···

बतरा : ओ० के०।

शीला और इरा भी उठ पड़ती हैं। बतर खट-खट करता हुआ पोर्टिको की ओर ब जाता है। गाड़ी में बैठकर तेज़ी से वह निक जाता है।

शीला : अजीब आदमी हैं ! किसी चीज़ की कोई फि ही नहीं ! घर की क्या हालत बना रखं है ! ··· यहां तो सफाई में ही हफ्तों ल जाएंगे···

इरा : मैंने कई बार सोचा, लेकिन···

शीला : कोई बात नहीं···अब मैं आ गई हूं···हम दोन मिलकर सब ठीक-ठाक कर लेंगे···

शीला और इरा सोफों के गिलाफ बदल रही हैं।

फूलदान सजाए जा रहे हैं।

परदे बदले जा रहे हैं। शीला, इरा और रामजी तीनों व्यस्त हैं।

सोने के फ्रेम वाली तसवीर के दोनों ओर शीला अपना और बतरा का फोटो लगाती है।

कार में शीला और बतरा जा रहे हैं।

बतरा और शीला डिपार्टमेंटल स्टोर में खरीददारी कर रहे हैं।

शीला इरा के दरवाज़े पर दस्तक देती है।

इरा का कमरा। शाम। दस्तक सुनकर इरा दरवाज़ा खोलती है। शीला एक पैकेट लिए खड़ी है—साड़ी का, जिसे इरा की ओर बढ़ाते हुए वह कहती है :

शीला : यह आपके लिए···

इरा : (पैकेट लेकर उसे खोलते हुए) अरे, इसकी क्या ज़रूरत थी!

शीला : पसंद नहीं आई ?

इरा : नहीं-नहीं···साड़ियां तो मेरे पास हैं···

शीला : तो क्या हुआ! ···यही तो खाने-पहनने के दिन हैं। बाद में कौन करता है यह सब और कौन देखता है किसीको! (हंसती है) जल्दी से पहनकर तैयार हो जाइए, आज हम लोग साथ-साथ डिनर लेंगे···वह भी यही कह रहे हैं···

एक झटके के साथ शीला बाहर नि
जाती है। जाते समय वह दरवाज़ा बन्द कर
जाती है।

इरा साड़ी को हाथों में लिए आईने
सामने खड़ी हो जाती है।

फ्लेश बैक

ग्रीन रूम। शाम। नाटक का सरंजा
है। इरा ग्रीन रूम में मेकअप कर रही है
शकुंतला की भूमिका करने के लिए उस
साड़ी पौराणिक युग की शैली में बांधी हुई
जिसके पल्ले का कोना कमर में खुंसा हुआ है
कंधे नंगे हैं। विमल आता है। स्क्रिप्ट
रजिस्टर उसके हाथ में है। बहुत थका हु
लग रहा है।

विमल : आप तैयार हो गईं, इराजी? (घड़ी देख
है)

इरा : जी नहीं...

विमल : कितनी देर लगेगी अभी?

इरा : जी नहीं...

विमल : इसका मतलब?

इरा : मैं बिलकुल तैयार हूं, लेकिन जी नहीं...

विमल : (चकराया-सा) जी...

इरा : जी हां...पिछले कई दिनों से आप मेरा ना
गलत बोल रहे हैं—इराजी नहीं, इरा...

विमल : ओह!...(जैसे उमड़ते प्यार में) इराजी...
इरा...बहुत दिनों से...जाने क्या सोच र
था मैं...इरा...मैं...

विमल इरा के निकट चला जाता है
क्या कहे, कैसे कहे, किस स्थिति में! वह इ
की कमर में अटका आंचल का पल्ला खो
लेता है। उसे कंधे से फैलाकर वह उसीसे इ
का सिर ढंक देता है, जैसे वधू सिर पर आंच

रखती है। विमल सामने रखे मेकअप के सामान में से लिपस्टिक उठाकर उसीसे इरा के माथे पर सुहाग की बिंदी लगा देता है।

एक क्षण के लिए सभी आवाज़ें रुक जाती हैं। इरा और विमल भर आंख एक-दूसरे को देखते हैं। फिर इरा धीरे से पलकें झुका लेती है। एक क्षण के इस ध्वनिहीन दृश्य के बाद फिर सभी आवाज़ें पूर्ववत् लौट आती हैं। इरा सामने शीशे में अपना वह रूप देखती रह जाती है, कि तभी हड़बड़ाया हुआ प्राम्पटर आता है, जैसे उसे कुछ पूछना है:

प्राम्पटर : विमलजी···सीन पांच, शकुंतला की सहेली एंटर करती हैं···पर यह एंटरी है किधर से? (हाथ में थमी कापी दिखाता है) स्क्रिप्ट में घपले बहुत हैं···

विमल और इरा खड़े हैं। इरा ने साड़ी पहले की तरह लपेट ली है।

विमल : (कुछ संकोच से)पर यह बिंदी···शकुंतला तो यह बिंदी लगाकर नहीं जा सकेगी···

इरा : लेकिन अब यह मिट भी तो नहीं सकती, विमल···

फ्लैश बैक समाप्त

बतरा का ड्राइंगरूम। शाम। सीढ़ियों के पास से ही शीला ऊपर देखते हुए कहती है:

शीला : क्या हुआ इराजी? ज़रा जल्दी कीजिए नहीं तो रिज़र्वेशन कैंसिल हो जाएगा···

इरा का कमरा। शाम। शीला की दी साड़ी हाथ में लिए इरा जैसी की तैसी बैठी है। पर शीला की आवाज़ से वह चौंक जाती है। वह उठती है और साड़ी को लिए बाथ-

रूम में चली जाती है।

एक होटल। रात। बजते हुए बैंड की धुन में कई जोड़े सामने के फ्लोर पर नाच रहे हैं। बतरा, शीला और इरा प्रवेश करते हैं। एक बेयरा उन्हें एक मेज़ के समीप ले जाकर आदर से बैठा देता है। साथ ही मेनू कार्ड उनके सामने रख देता है। कार्ड उठाते हुए बतरा कहता है :

बतरा : आज खाने का सिलेक्शन इराजी का रहेगा ···क्यों शीला···?

शीला : (मुसकराकर) जरूर···

बतरा मेनू कार्ड इरा की ओर बढ़ा देता है।

इरा मेनू देखने लगती है कि तभी कोई बतरा को पुकारता है···

सोलंकी : हलो बतरा !

सोलंकी कई मेज़ों को पार करता हुआ बतरा के सामने आकर खड़ा हो जाता है। हाथ मिलाकर सोलंकी कहता है :

सोलंकी : आजकल किधर रहते हो दोस्त ! महीनों गुज़र गए मेस की तरफ आए ही नहीं !

बतरा : (बहुत ठंडेपन से उसकी बात टालते हुए) शीला, इनसे मिलो—मेजर सोलंकी···शीलाजी और मिस इरा···

शीला : (सोलंकी से) आइए बैठिए।

सोलंकी : थैंक्स···मेरे साथ कुछ लोग और हैं। (गौर से शीला और इरा को देखते हुए) आप लोग मेस में आइए कभी। बतरा, कभी आओ यार···इन लोगों को भी लेकर आओ···मजा आएगा···

बतरा सोलंकी, शीला और इरा को बारी-बारी देखता रह जाता है।

सोलंकी : अच्छा, मैं फोन करूंगा, राइट ! (और बतरा

का हाथ स्वयं पकड़कर हिलाता है) सो लांग !...(कहता हुआ, मुसकराकर वह अपनी मेज़ की तरफ चला जाता है)

बतरा : इसीलिए मैं कहीं आता-जाता नहीं। अब सुबह-शाम फोन आएंगे।

शीला : छोड़ो भी...डोंट वी टची। चलिए इराजी, आर्डर दीजिए...

इरा फिर से मेनू देखने लगती है।

बतरा : (सहज होने की चेष्टा में) तुम्हें मालूम है शीला, इराजी बहुत अच्छी स्टेज आर्टिस्ट हैं...

शीला : अच्छा !

बतरा : मैंने कभी इन्हें स्टेज पर देखा तो नहीं, लेकिन इनके बारे में पढ़ा और सुना बहुत है...अरे हां, इराजी, विमल साहब की चिट्ठी आई है कभी ?

इरा मेनू से नज़र हटा लेती है; पर भीतर जैसे वह घबरा उठी हो।

इरा : जी...आती रहती है...(फिर मेनू देखने लगती है)

बतरा : दिल्ली गए हैं ?

इरा : जी...

बतरा : और यहां जो परमानेंट स्टेज बनाने वाले थे, उसका क्या हुआ ?

इरा : जी, उसीके सिलसिले में...

बतरा : जो भी कहिए इराजी, मुझे तो लगता है लोग नाटक देखना पसंद ही नहीं करते। वैसे भी इन सिनेमा वालों ने...सुनता हूं नाटक में चार-पांच रुपये से कम कोई टिकट ही नहीं होती...आप खुद ही सोचिए, चार-पांच की बजाय डेढ़-दो रुपये में आदमी राजेश खन्ना, हेमा मालिनी की पिक्चर क्यों न देखे—वह भी एयर कंडीशंड हाल में...

इरा : जी हां···सो तो है···

बेयरा आता है। छोटा-सा पैड-पेंसिल उसके हाथ में है। इरा की ओर वह झुक जाता है।

बतरा : (इरा से) देखिए इराजी, सब कुछ वैजिटेरियन ही मत मंगवा लीजिएगा···

बतरा हंसता है। शीला भी हंस पड़ती है।

बतरा का घर। रात। इरा सीढ़ियों से ऊपर आ रही है। बाईं तरफ का कमरा बंद है। अंग्रेज़ी रिकार्ड बज रहा है। शीला और बतरा की हंसी कभी-कभी गीत की ध्वनि से ऊंची उठ जाती है।

इरा चलती निगाह से बतरा के कमरे की ओर एक बार देखती है। फिर अपने कमरे में चली जाती है।

अंग्रेज़ी गीत की धुन ओवरलैप करती रहती है।

इरा दरवाज़ा बंद कर लेती है और उसीसे पीठ टिकाए खड़ी रहती है। पलंग के नीचे पड़े एक सूटकेस पर उसकी नज़र जाती है। इरा आगे बढ़कर सूटकेस को खींच लेती है, उसे खोलती है और कपड़ों के नीचे से कुछ खोजने लगती है।

विमल की तसवीर निकालकर वह उसे एकटक देखने लगती है। बतरा और शीला की हंसी का ऊंचा स्वर ओवरलैप करता है। इरा को ऐसा लगता है जैसे वे दोनों विमल और इरा पर ही हंस रहे हों। बीच-बीच में शीला की खिलखिलाहट और भी तेज़ होने लगी है। दरवाज़े पर दस्तक होती है।

इरा : कौन ?

रामजी : जी मैं रामजी !

जल्दी से तसवीर को सूटकेस में रखकर इरा उठ खड़ी होती है और जाकर दरवाज़ा खोलती है। सामने रामजी खड़ा है।

रामजी : पड़ोस की मद्रासिन आई हैं। आपसे मिलना चाहती हैं।

इरा : कौन ? मिसेज़ कृष्णन ?

रामजी : जी हां, वही…

इरा सीढ़ियों से नीचे उतर आती है। नीचे सोफे पर मिसेज़ कृष्णन बैठी हैं—उम्र ४० के आसपास।

मि० कृष्णन : इराजी, मुझे एक जरूरी फोन करना था।

इरा : तो कीजिए न।

मिसेज़ कृष्णन फोन करने लगती हैं। इरा सोफे पर बैठ जाती है और एक पत्रिका उठाकर देखने लगती है।

मि० कृष्णन : (फोन पर) कौन ? डाक्टर चन्द्रमोहन ! अरे, आपकी आवाज़ को क्या हो गया ?… क्या कहते हैं डाक्टर साहब, अभी तो दस लड़कियां आपसे शादी करने को तैयार हो जाएं। आपको एक तकलीफ देनी थी—मेरे दोनों बच्चों को बुखार आ गया है…ओ० के०—ओ० के० डाक्टर…

मिसेज़ कृष्णन टेलीफोन रख देती हैं।

मि० कृष्णन : एक कष्ट और…

इरा : जी कहिए…

मि० कृष्णन : आपके पास…सौ के छुट्टे होंगे ?

इरा : ऊं…आइए न…ऊपर ही आइए…

इरा के पीछे-पीछे मिसेज़ कृष्णन ऊपर कमरे तक आती हैं। बैग से रुपये निकालकर इरा गिनकर मि० कृष्णन की ओर बढ़ा देती है, यह कहते हुए :

इरा : जब से शीलाजी आई हैं, मेरा तो कोई खर्च

ही नहीं रह गया है। वरना सौ के छुट्टे मेरे पास…

मि० कृष्णन : अच्छा हुआ…आपको कम्पनी तो मिली…

इरा : हां, अकेले तो बहुत बोर हो जाती थी…

मि० कृष्णन : अच्छा चलूं…आप तो कभी आती ही नहीं।

इरा : आप भी कहां आती हैं…कुछ काम पड़ता है तभी आती हैं।

मि० कृष्णन : हां, सो तो है… बच्चों में सारा वक्त यों ही निकल जाता है…तो आइए न किसी दिन…

इरा : जी, आऊंगी।

मिसेज़ कृष्णन और इरा कमरे के दरवाज़े तक आती हैं, फिर सीढ़ियां उतरने लगती हैं। बाहर के दरवाज़े पर आकर :

मि० कृष्णन : अच्छा !

इरा मुसकराकर सिर हिलाती है। फिर वापस सीढ़ियां चढ़ने लगती है।

भाभी का कमरा। दिन। इरा सीढ़ियां चढ़ रही है। एक दरवाज़े के पास वह रुक जाती है। भीतर भाभी सब्जी काट रही हैं।

इरा : नमस्ते, भाभी…

भाभी : (बच्ची की चोटी करते-करते) अरे आओ इरा, आओ…मैं तो सोच रही थी तुम एकदम भूल ही गईं…कहो, कैसी हो ?

इरा भीतर भाभी के पास ही खाट पर बैठ जाती है। ढीली-सी।

इरा : ठीक हूं। आप कैसी हैं ? भइया ठीक हैं ?

भाभी : सब ठीक हैं। अपनी सुनाओ। फिर आईं ही नहीं ! (सब्जी काटते हुए) कलकत्ता गई थीं क्या ?

इरा : कलकत्ता ! किसके पास ?

भाभी : (कुछ सोचकर) विमल की चिट्ठी आई कोई ?

इरा : आती तो आपके पते पर ही…आज सोचा,

देख आऊं शायद कोई चिट्ठी आई ही हो··· और आप मुझसे पूछ रही हैं···कभी-कभी लगता है, वह यहां आकर चुपचाप मुझे खोज गया हो। उसे पता भी नहीं कि मैं बतरा साहब के पास रहने लगी हूं···

भाभी कुछ सोचती-सी उठती हैं और इरा की ओर एक बार देखकर रसोई में चली जाती हैं। वहीं चूल्हे पर चाय का पानी चढ़ाते हुए वह सवाल करती हैं :

भाभी : तो विमल के बारे में तुम्हें कुछ भी मालूम नहीं ?

इरा : क्या ?

भाभी : कुछ भी मालूम नहीं तुम्हें ?

इरा : आखिर क्या, भाभी ? बात क्या है ?

भाभी के चेहरे पर चिंता की रेखाएं उभर आती हैं। वे चाय बनाने लगती हैं।

इरा उठकर रसोईघर की ओर चली जाती है, और दरवाज़े के समीप खड़ी हो जाती है।

इरा : बात क्या है, भाभी ?

चाय की प्याली इरा की ओर बढ़ाकर भाभी कहती हैं :

भाभी : आओ, बैठो।

इरा और भाभी दोनों फिर से आकर कमरे में बैठ जाती हैं। इरा भाभी की ओर देखती है।

भाभी : सुनकर तुम्हें दुःख होगा, इरा···

इरा : बताइए भी तो भाभी, हुआ क्या है ?

भाभी : तुम्हारे भइया पिछले दिनों कलकत्ता गए हुए थे। वहां विमल से उनकी मुलाकात हुई थी।

इरा : फिर ?

भाभी : वहां के अखबारों में विमल की तसवीर छपी थी।

इरा : नाटक की ?
भाभी : नाटक की नहीं, इरा···
इरा : तो ?···
भाभी : विमल आजकल जेल में है···

इरा अवाक् रह जाती है।

भाभी : वह वहां किसी गिरोह में शामिल हो गया है—वही जो हड़ताल करते फिरते हैं और तोड़-फोड़ करते हैं। यह गिरोह पकड़ा गया था। इन्होंने अखबार में पढ़ा। विमल से मिलने भी गए थे···तुम थोड़ी देर बैठो···ये अभी आते ही होंगे। खुद ही सब बता देंगे···

इरा ठगी-सी बैठी रह जाती है। चाय की प्याली में से कुछ निकालकर वह फेंक देती है—चम्मच से।

भाभी : मैं समझ रही थी, तुम्हें सब पता है···
इरा : मुझे तो कुछ पता नहीं है भाभी···मैं तो इतनी बड़ी दुनिया उसीके सहारे छोड़कर चली आई थी। इतनी बड़ी बात हो गई और उसने मुझे दो शब्द तक नहीं लिखे !···
भाभी : हां, सो तो है···
इरा : (उठने को होती है) अच्छा···ठीक है··· अब चलूंगी भाभी···
भाभी : बैठो न। खाना-वाना खाकर शाम को चली जाना। थोड़ा जी भी संभल जाएगा।
इरा : नहीं भाभी, जी ठीक ही है। अब तक तो यह नौकरी वक्त काटने के लिए कर रही थी··· लेकिन अब तो लगता है, नौकरी करके ही ज़िंदगी काटनी होगी···अच्छा, फिर आऊंगी कभी···(चलती है)

बतरा का मकान। सुबह। इरा चुपचाप अपनी काम की मेज़ पर बैठी है। आशंकाग्रस्त-सी। उदास-सी। रामजी अखबार लेकर आता

है। इरा अखबार लेकर देखने लगती है। घड़ी साढ़े दस बजाती है। रामजी चाय की ट्रे में से एक प्याला इरा के लिए बना देता है।

इरा : (रामजी से) साहब बेड-टी ले चुके ?

रामजी : दो बार गया। हिम्मत नहीं हुई। कमरे में सन्नाटा था।

तभी फोन की घण्टी बजती है। इरा उठाती है :

इरा : जी···यस प्लीज···बतरा साहब···आप मैसेज दे दीजिए··जी···जी···अगर बहुत ज़रूरी हो···नहीं···नहीं···उनकी तबियत कुछ ठीक नहीं है। जी। एक सेकेंड···(कुछ नोट करती है) जी २६४२···

ठीक इसी समय बतरा के कमरे से शीला के एकाएक खिलखिलाकर हंसने की आवाज़ आती है। इरा आश्चर्यचकित-सी देखती रह जाती है। रामजी चाय की ट्रे लेकर लपकता है। इरा एक कागज़ निकालकर पत्र लिखने लगती है। चाय का प्याला पास सरका लेती है।

इरा : (खत लिखते-लिखते पढ़ने की आवाज़ में) दमयन्ती डियर ! अब कहने के लिए इतना कुछ जमा हो गया है कि तुमसे मिले बगैर बात बनेगी नहीं···विमल कलकत्ता में जेल में है, वह आतंकवादी···

फिर कुछ सोचकर रुक जाती है और पत्र उठाकर फाड़ देती है।

बतरा का ड्राइंगरूम। रात। टेलीफोन की घंटी बजती है। इरा पास ही खोई-सी बैठी है। घंटी बजती जा रही है, और इरा अपने-आप में ही खोई हुई है। उसे जैसे घंटी सुनाई ही नहीं पड़ रही है। रामजी आकर रिसीवर

उठाता है और इरा की ओर बढ़ा देता है।

इरा चौंककर रिसीवर ले लेती है और बात करने लगती है :

इरा : जी…जी…नहीं, वो तो बाहर गए हैं…यस …पता नहीं…मैं नोट कर लेती हूं…जी हां…जी हां…आपका नंबर है…मैं कह दूंगी (रिसीवर रख देती है)

इरा पैड पर नोट करने लगती है। घड़ी में नौ बजते हैं। इरा उठ जाती है और आज का नोट्स वाला कागज़ पैड में से निकाल लेती है। वह सीढ़ियां चढ़कर अपने कमरे की ओर बढ़ती ही है कि गाड़ी का हार्न सुनाई पड़ता है। इरा रुक जाती है। कई छोटे-बड़े पैकेट लिए शीला गाड़ी से उतरती है। बतरा भी उतरता है और शीला के साथ हो लेता है। इरा सीढ़ियों के पास खड़ी दोनों को देखती रहती है। शीला मचलती हुई सीढ़ियां चढ़ने लगती है। बतरा भी पीछे-पीछे है।

इरा एक क्षण खड़ी रहती है। फिर बतरा के कमरे में चली जाती है। मेज़ पर नोट्स वाला कागज़ रखकर वह अलमारी के समीप खड़ी हो जाती है। बतरा रेडियोग्राम ऑन कर देता है। शीला पैकेट खोल-खोलकर चीज़ें निकालने लगती है। इरा को खड़े देख शीला कहती है :

शीला : आप गई होतीं तो कुछ चीज़ें आपकी पसंद की भी आ जातीं…मैं अकेली क्या-क्या देखूं और क्या-क्या लूं !…

इरा शीला की बात का कोई उत्तर नहीं देती। वह सीधे बतरा से बात करती है :

इरा : सुनिए !

टाई खोलते हुए बतरा कहता है :

बतरा : हुं ?…

इरा : मुझे कुछ दिनों की छुट्टी चाहिए।
बतरा : क्यों ? क्या बात है ?
इरा : ज़रा नागपुर जाना चाहती हूं।
बतरा : विमल साहब वहीं हैं क्या आजकल ?
इरा : जी नहीं। दमयंती रहती है वहां—मेरी सहेली।
बतरा : ओ···हां-हां···जिनकी चिट्ठियां आया करती हैं ?
इरा : जी।
बतरा : (रेडियोग्राम ऑफ करते हुए) हो आइए। कब तक लौटेंगी ?
इरा : जी, दस-बारह दिन में ही।
शीला : लगता है, इराजी का यहां मन नहीं लगता !
बतरा : क्यों, अब तो तुम्हारी कंपनी भी मिल गई है इन्हें।
शीला : मैं अभी तक इनका मन जीत नहीं पाई।

बतरा सौ-सौ के तीन-चार नोट पर्स में से निकालकर इरा की तरफ बढ़ा देता है।

बतरा : कब जाना चाहती हैं ?
इरा : इसकी क्या ज़रूरत है ?
बतरा : रख लीजिए। बाहर ज़रूरत पड़ जाती है···
इरा : मेरे पास हैं···
बतरा : रख लीजिए। खर्च न हों तो लौटा दीजिएगा।

इरा रुपये रख लेती है। बतरा रुपये देकर मुड़ जाता है।

बतरा : आपकी सहेली करती क्या हैं वहां ?
इरा : जी, सरकारी अस्पताल में नर्स है···

दमयंती का कमरा। दिन। दमयंती अपनी नर्स की ड्रेस में है। वह ड्रेस उतार रही है और जैसे अभी, कुछ ही देर पहले वह ड्यूटी से आई है। इरा खाट पर उलटी लेटी हुई है—तकिये पर ठोड़ी टिकाए।

दमयंती : (क्लिप निकालते हुए) तू उसे समझा तो
सकती थी, इरा !

इरा : (वैसे ही लेटे-लेटे) क्या समझाती, शक का
कोई इलाज नहीं दम्मो ! विमल मेरी नौकरी
कराके खुद पछताता रहा । सिर्फ फोन रिसीव
करने के लिए किसीको नौकर रखने की क्या
जरूरत हो सकती है ? और अगर रखा भी
जाए तो अढ़ाई सौ रुपये का वेतन कोई क्यों
देगा ?

दमयंती : इस छोटी-सी बात के लिए अगर रिश्तों में
दरार पड़ने लगी थी तो तुझे नौकरी छोड़ देनी
चाहिए थी ।

इरा : खाती क्या ?

दमयंती : जैसे भी होता, विमल कुछ न कुछ तो इंतजाम
करता ही । जब तू उसके लिए डैडी को छोड़
सकती थी तो नौकरी छोड़ देने में क्या दिक्कत
थी ?

इरा : नौकरी भी तो उसने ही दिलवाई थी । फिर
पता नहीं क्या शक उसके दिल में समा गया—
वह यह समझने लगा कि मैं बतरा के साथ
किसी समझौते पर उतर आई हूं । उसका शक
और नाकामियां—दोनों ने मिलकर उसे
मजबूर कर दिया···

दमयंती : मैं छुट्टी ले लूं ? कुछ दिन घूम आएं, तेरा भी
मन बहल जाएगा । पास में सतपुड़ा के पहाड़
हैं···बड़ी खूबसूरत जगहें हैं···

इरा : दम्मो, ये तेरे पहाड़, नदियां, वादियां, झरने
जंगल, सच पूछ तो मुझे बिलकुल नहीं बांधते
कोशिश करके भी मैं इनमें रस नहीं पाती
सीधे-सीधे कहूं तो मैं सिर्फ आदमी से प्यार
कर सकती हूं···उससे सुन्दर कुछ और है ही
तो नहीं···

दमयंती : अब क्या सोचती है, कलकत्ता जाएगी ए

वार ?

इरा : क्या करूंगी जाकर ?…खोजूंगी कहां ? जेल में ? और उसने कहीं मिलने से इनकार कर दिया…

दमयंती : ऐसा वह क्यों करेगा ?

इरा : ऐसा क्यों होता है दमयंती कि जब कोई एक-दूसरे को कम जानता है तो ज़्यादा विश्वास कर लेता है और एक-दूसरे को जानने के बाद विश्वास कम होता जाता है।…

दमयंती : मतलब ?

इरा : (गहरी सांस लेकर) दम्मो ! पहली बार एक नाटक में हिरोइन बनने का प्रस्ताव लेकर जब मेरे होस्टल के गेट पर वह मुझे मिला था—तो सच कहती हूं दमयंती ! चश्मे के भीतर से झांकती हुई उसकी आंखों में अजीब से विश्वास की चमक थी। शरमाते हुए वह मुझसे बोला…

फ्लैश बैक

इरा की सपनीली आंखों के सामने विमल का पहली भेंट वाला दृश्य। चश्मे से झांकती विमल की आंखें।

इरा पुस्तकें और कापियां थामे खड़ी है। विमल उससे बात कर रहा है :

विमल : कई बार योजना बनाई और बीच में ही छोड़ देनी पड़ी। इस नाटक के लिए जिस शकुंतला की तलाश थी, वह कभी मिली ही नहीं। आपको देखकर लगा कि शायद मेरा वह सपना…आप एक बार हां कह दीजिए, बस…

इरा : देखिए…

विमल : विमल है मेरा नाम…

इरा : देखिए विमलजी, ऐसा नहीं है कि मुझे नाटकों में दिलचस्पी नहीं है…लेकिन…

विमल : लेकिन क्या, इराजी ?

इरा : (कुछ झिझकते हुए) मेरे डैडी एक फौज
अफसर हैं और उन्हें यह बात बिलकुल पसं
नहीं।

विमल आंखें नीची किए इरा की बा
सुनता रहता है। इरा भी अपनी बात पू
करके चुपचाप खड़ी रहती है। फिर जैसे इ
खामोशी से अकुलाकर कहती है :

इरा : अच्छा, मैं चलती हूं...

इरा होस्टल की ओर मुड़ने को होती
कि विमल कहता है :

विमल : इराजी !

इरा फिर रुक जाती है।

विमल : देखिए, मैं आपके डैडी की भावनाओं को ठे
नहीं पहुंचाना चाहता, लेकिन क्या जरूरी
कि मां-बाप की सभी बातें सही ही हों ?...

इरा : हो सकता है, आप ठीक कह रहे हों, विमल
जी, लेकिन मेरे डैडी का अपना एक डिसिप्लि
है, जिसे मैं तो क्या, वे खुद भी कभी नहीं तो
सकते...

विमल : आपके डैडी यहीं हैं ?

इरा : जी नहीं, आजकल वे कश्मीर की सीमा पर है

विमल : ओ...

इरा : अच्छा, विमलजी...

विमल हाथ जोड़ देता है। इरा होस्ट
में चली जाती है।

इरा होस्टल की सीढ़ियां चढ़कर पह
मंजिल में अपने कमरे की ओर मुड़ने को
है कि एक लड़की, रेशमा, उसे आवाज दे
है :

रेशमा : इरा !

इरा मुड़कर देखती है। रेशमा तेजी
दौड़ती हुई उसकी ओर आती है।

रेशमा : वहां भी इतनी देर ? कब से इंतजार कर रही हूं।

इरा : क्यों ?

रेशमा : वाह ! भूल गई ! शाम के शो के टिकट कटा रखे हैं।

इरा : अरे हां, मैं तो भूल ही गई थी···लाइब्रेरी में ही बैठी रह गई···

इरा कमरे का ताला खोलकर भीतर आती है। सभी खिड़कियां बंद हैं। इरा बढ़कर एक खिड़की को खोल देती है। रेशमा उसके पास आकर खड़ी हो जाती हैं। वहां से विमल दिखाई देता है—धीरे-धीरे चलता हुआ।

रेशमा : मैं तो तैयार ही हूं। तू फटाफट तैयार हो जा।

इरा खिड़की से विमल को देख रही है। वह सामने के मोड़ पर एक पान-सिगरेट की दुकान पर खड़ा सुलगती हुई रस्सी से सिगरेट सुलगा रहा है।

इरा : रेशमा, उसे जानती है ? (उसका इशारा विमल की ओर है)

रेशमा : कौन, वह जो झोला लटकाए है ?

इरा : हां।

रेशमा : अरे वह विमल है ! तू नहीं जानती उसे ?

इरा : न···अभी मुझे गेट पर मिला था।

रेशमा : जानती है, उसके झोले में क्या है ?

इरा : क्यों, कोई जादू की छड़ी है क्या ?

रेशमा : अरे नहीं, उसकी पूरी गृहस्थी।

इरा : हट !

रेशमा : हां रे ! नाटकों के पीछे पागल है···उसके उस झोले में तुझे पांच-सात नाटक मिल जाएंगे, स्टेज के डिज़ाइन, कास्ट्यूम के डिज़ाइन, लाइटिंग स्कीम भी···और साथ ही खाने का सामान।

इरा : क्यों घर-बार नहीं है उसका ?

रेशमा : सुना है, एक मां है, गांव में रहती है। यह
एक कमरा किराये पर लेकर रहता है।

इरा : बड़ी खोज-खबर रखती है उसकी ! क्या
है ?

रेशमा ऐसे आंखें नचाती है जैसे बता
चाहती हो कि उसे विमल से कुछ लग
है।

इरा : सच !

रेशमा : अरे पगली ! वह मेरा क्लासफेलो है… अब
चल, अब जल्दी से तैयार हो जा…

इरा : बस, पांच मिनट।

तौलिया उठाकर इरा बाथरूम में च
जाती है।

इरा एक पेड़ के नीचे, उसके तने से
टिकाए बैठी पढ़ रही है।

कालेज का कंपाउंड है। इक्का-दु
छात्र-छात्राएं इधर-उधर आ-जा रहे हैं।

थोड़ी देर बाद ही विमल, बगल में
निकेतनी झोला लटकाए, इरा से कुछ
उससे बेखबर दूसरे पेड़ के नीचे बैठ जाता
और झोले से 'शकुंतला' निकालकर प
लगता है। फिर वह झोले में से डबलरोटी
मक्खन निकालता है और खाने और प
लगता है।

इरा विमल से छिपी उसकी यह ह
देखती रहती है।

विमल पढ़ते-पढ़ते, खाते-खाते, कुछ नो
भी लेता जाता है। इरा के होंठों
मुस्कराहट आ जाती है। अपनी 'शकुन्तला'
अपनी पुस्तकों के बीच रख देती है।

दूर से पीरियड खत्म होने की

ओवरलैप करती है। इरा उठकर चली जाती है। मुड़-मुड़कर विमल की ओर भी देखती जाती है।

विमल बैठा पढ़ता रहता है। फिर एक और स्लाइस निकालकर उसपर मक्खन लगाता है।

होस्टल। इरा का कमरा। सुबह। इरा और रेशमा की छोटी-सी मेज़ पर डबलरोटी और मक्खन रखा है। दोनों नाश्ता कर रही हैं। इरा स्लाइस पर मक्खन लगाते-लगाते कहती है :

इरा : अच्छा यह बता, आदमी सिर्फ डबलरोटी पर ज़िन्दा रह सकता है?

रेशमा उठकर कमरे के दूसरी तरफ जाती है, जग से पानी ढालकर पीती है और फिर केतली से चाय ढालते हुए कहती है :

रेशमा : इसीलिए तो साहब चार दिनों से बिस्तर पर पड़े हैं।...

इरा एकटक रेशमा को देखती रह जाती है। कई प्रश्न उसकी आंखों में उतर आए हैं।

रेशमा जल्दी-जल्दी प्लेट में चाय डालकर पीने लगती है।

इरा : तू कहीं जा रही है?

रेशमा : हां, विमल के पास नोट्स पड़े हैं, सोचा लेती आऊंगी, और उसे ज़रा देखती भी आऊंगी...

आईने के सामने जाकर रेशमा अपना चेहरा देखने लगती है। फिर कंघी से बाल संवारते हुए वह इरा से पूछती है:

रेशमा : तेरा क्या प्रोग्राम है?

इरा : कुछ नहीं...

रेशमा : तेरी यही आदत मुझे अच्छी नहीं लगती...

इरा : तो क्या करूं ?…

रेशमा : बाहर चलकर एक कप कॉफी तो ले सकते है…चल, चलेगी मेरे साथ ?

इरा : कहां ?

रेशमा : विमल के यहां।

इरा : मैं क्या करूंगी जाकर ?

रेशमा : मुझे कम्पनी ही देगी। चल, थोड़ी शॉपिंग भी करनी है…

इरा चुप रहती है। दुविधा में पड़ी।

रेशमा : चल उठ ! संडे को कमरे में बैठे-बैठे बोर हो जाते हैं।…

विमल का कमरा। दिन। विमल बिस्तर पर है। बार्ले वाटर का गिलास पास रखा है। इरा की ओर एकटक देख रहा है।

विमल : यह तो खैर सोच सकता था कि कभी, कुछ और दिनों बाद शायद आप यहां कभी चली आएं, पर आज…

रेशमा दीवार में बने रैक्स में कुछ ढूंढ़ रही है—पुस्तकों, फाइलों के बीच। वहीं से कहती है :

रेशमा : ब्रिगेडियर की बेटी है, कोई मामूली बात थोड़े ही है।

इरा आंखें झुका लेती है। फिर धीरे से पूछती है :

इरा : शकुन्तला मिल गई आपको ?

विमल : हां।

इरा : कब स्टेज कर रहे हैं ?

विमल : जब आप कहें।

इरा : मेरे कहने से क्या होगा ?

विमल करवट बदलता है और दूसरी ओर मुंह किए-किए ही कहता है :

विमल : मेरा नाटक तो तभी होगा, इराजी, जब आपकी

स्वीकृति मिल जाएगी।

इरा : न मिली तो ?...

विमल : नहीं होगा।

इरा : इतना विश्वास है मुझपर ?

विमल : एक विश्वास के सहारे ही तो जी रहा हूं।

अलमारी की तरफ से रेशमा पूछती है :

रेशमा : दवा कब खानी है ?

विमल : साढ़े ग्यारह बजे।

रेशमा : मैं आध घण्टे में बाजार से लौट रही हूं फिर दवा दूंगी...इरा ! तू बैठेगी या चलेगी...

विमल : इन्हें यहीं रहने दो, रेशमा !

रेशमा : ठीक है, तू बैठ, मैं आती हूं। (चली जाती है)

इरा और विमल चुपचाप बैठे रहते हैं। फिर इरा इस खामोशी से अकुलाकर बात छेड़ती है :

इरा : खाना कहां खाते हैं ?

विमल : सब कुछ आज ही जान जाइएगा ?

इरा चुप रह जाती है।

विमल : पड़ोस में एक परिवार रहता है। भाई-भाभी कहता हूं उन्हें। उनके बच्चों को पढ़ा देता हूं...रात का खाना वहीं से आ जाता है... और दिन का...

इरा : पावरोटी खाकर गुजारा कर लेते हैं...

विमल : बहुत खोज-खबर रखती हैं मेरी !

इरा : खोज-खबर नहीं, अपनी आंखों से देखा है।

विमल : सच !

तभी हाथ में वार्ली का गिलास लिए भाभी आती हैं—विमल उनका परिचय इरा से कराता है। भाभी इरा को कभी अपने यहां आने के लिए कहकर चली जाती हैं।

विमल को जोरों की खांसी आती है। वह लगातार खांसता रहता है। इरा को समझ ही

नहीं आ रहा कि वह उसकी कैसे मदद करे... खांसते-खांसते विमल करवट बदल लेता है। इरा उसके पास जाकर उसकी पीठ सहलाने लगती है। कुछ देर बाद विमल की खांसी रुक जाती है। विमल बड़ी लाचार निगाहों से इरा को देखता है। वह हांफ रहा है। उसकी आंखों में पानी भर आया है। पास ही पड़े तौलिये से मुंह पोंछकर वह कहता है :

विमल : ज़रा-सी ठंड लग जाने से ही बड़ी खांसी हो जाती है।

इरा : बुखार भी तो है...

विमल : नाटक शुरू हुआ नहीं कि तबियत एकदम ठीक...।

इरा : (मुस्कराकर) हूं ?

विमल : नाटक की दुनिया भी बड़ी अजीब है, इराजी! दो घण्टे में आदमी कितनी तरह की जिन्दगी जी लेता है !

तभी रेशमा प्रवेश करती है।

रेशमा : मुझे देर हो गई—याद ही नहीं था—आज दुकानें बन्द रहेंगी। दवा ली तुमने ?

विमल : ले लूंगा।

रेशमा : तो समय पर ले लिया करो ना। मैं ये किताबें लिए जा रही हूं—कल नहीं तो परसों वापस कर दूंगी—चल उठ इरा !

इरा उठ पड़ती है।

विमल : तकलीफ के लिए मेरी ओर से माफी मांग लेना।

इरा : अपने विमलजी से कह दे रेशमा, जब शकुंतला मिल ही गई है तो स्टेज करने में देर क्यों कर रहे हैं ?

दोनों चली जाती हैं।

इरा के पिता का ड्राइंगरूम। रात।
अखबार में इरा और विमल की तसवीरें छपी हैं। 'शकुंतला' के मंचन के संदर्भ में नाटक की समीक्षा भी प्रकाशित हुई है।

इरा फायर-प्लेस की तरफ पीठ किए एक कुर्सी पर बैठी है। उसके चेहरे से ऐसा लगता है जैसे पिता-पुत्री में तनाव है।

ब्रि० वर्मा : यह विमल कौन है?

इरा : मेरे साथ यूनिवर्सिटी में है।

ब्रि० वर्मा : फादर क्या करते हैं?

इरा : फादर नहीं हैं।

ब्रि० वर्मा : पढ़ता कैसे है?

इरा : ट्यूशंस करके।

ब्रि० वर्मा : हूं।

ड्राइंगरूम का दरवाजा खुलता है और ३०-३५ के आसपास की एक सुन्दरी भद्र महिला मचलती हुई घर में प्रवेश करती है।

भ० महिला : हलो!

ब्रि० वर्मा मुसकराकर उसका स्वागत करते हैं। महिला मचलती हुई आकर ब्रि० वर्मा के पास सोफे पर बैठ जाती है। ब्रि० वर्मा मुसकराकर कहते हैं :

ब्रि० वर्मा : मैं तुम्हारा ही इंतजार कर रहा था···क्लब चलोगी?

भ० महिला : ओ येस!···तुम कब आई इरा···

इरा : (उदासीनता से) आज ही···

ब्रि० वर्मा : यह पहला मौका है, इरा, इसलिए सिर्फ बात कर रहा हूं (सिगार निकालकर सुलगाते हैं) कालेज में कुछ लड़के पढ़ने-लिखने नहीं, जी बहलाने के लिए आते हैं··· ऐसे लड़कों से तुम्हें बचकर रहना चाहिए।

भ० महिला : क्या बात है? क्यों बिगड़ रहे हैं बेचारी

पर ?

ब्रि० वर्मा : कोई भी कदम उठाने से पहले, सब कुछ सोच-समझ लेना चाहिए···

इरा : मैंने ऐसा कोई कदम नहीं उठाया है, डैडी !

ब्रि० वर्मा : बहस करना और सुनना, दोनों मेरे प्रोफेशन के खिलाफ हैं, इरा ! दिस इज़ माइ आर्डर एंड यू हैव टु ओबे इट ! ··· कम आन, लेट अस गो···।

ब्रिगेडियर वर्मा और भद्र महिला उठ जाते हैं, और दरवाज़े से बाहर निकल जाते हैं।

फायर-प्लेस में शोले दहक उठते हैं। इरा के चेहरे पर उनकी लौ पड़ती है। उसका चेहरा लाल हो गया है।

एक पुरुष-हाथ स्त्री-हाथ की ओर एक रजिस्टर बढ़ाता है। साथ ही आवाज़ है :

विमल की आवाज़ : यह है वह नाटक। तुम अपना रोल ठीक से देख जाओ···

विमल और इरा नदी के किनारे बैठे हैं। इरा रजिस्टर को घुटनों पर रख लेती है। फिर कुछ कंकड़ उठाकर नदी के जल में फेंकने लगती है।

विमल : तुम चुप क्यों हो ?

इरा : सोच रही हूं, विमल···कभी-कभी कुछ भी समझ में नहीं आता···

विमल : क्या ?

इरा : एक तरफ सपने हैं, मुक्ति है, पर रास्ते में अनेक अड़चनें भी हैं।

विमल : पर शिमला ड्रामा कम्पीटीशन में तुम्हें चलना ही है। तुम नहीं जाओगी तो यह ट्रूप भी नहीं जाएगा।

इरा : यही तो सोच रही हूं…डैडी मानेंगे नहीं।

विमल : उन्हें समझा लो न !

इरा : उन्हें कुछ भी समझा सकना मुश्किल है।

विमल : मुझे विश्वास है, तुम सब सुलझा लोगी…

इरा : तुम नहीं समझोगे, विमल ! लड़के हो न ! लड़की होते तो शायद समझ भी लेते। तुम नहीं जानते, जिस लड़की की मां न हो, उसे ज़िन्दगी-भर भटकना पड़ता है। वह नार्मल होकर जीने की हकदार नहीं होती। उसका न कोई मित्र होता है, न कोई साथी…

विमल : मैं क्या करूं, इरा…अब मैं अपने सपने भी तुम्हारी आंखों से देखने लगा हूं…और मुझे तुमपर असीम विश्वास है…

इरा : कितना विश्वास करोगे मुझपर, विमल ?

विमल : जितना मेरे पास है ! …(एक क्षण रुककर) डैडी से पूछोगी न ?

इरा : हां, पूछूंगी…

होस्टल में इरा का कमरा। दिन। इरा आदमकद शीशे के सामने खड़ी है।

इरा : डैडी ! (जैसे अपनी आवाज़ और स्वर से नाखुश हो, फिर स्वर को बदलकर) डैडी! (इस वार भी संतुष्ट नहीं; फिर स्वर में थोड़ी और मिठास लाकर) डैडी ! (और मुड़कर वह मेज़ के पास चली जाती है जैसे डैडी के सामने पोज़ीशन ली हो) डैडी, एक बात कहूं ?

ब्रि० वर्मा : (स्वर) येस !

इरा : मैं शिमला जा रही हूं।

ब्रि० वर्मा : (स्वर) क्यों ?

इरा : वो… वो…हम लोगों का एक ड्रामा ट्रुप जा रहा है…

ब्रि० वर्मा : ड्रामा ! थियेटर ! नाटक ! मैं तुमसे कितनी बार कह चुका हूं, इरा, कि मुझे यह सब कतई पसन्द नहीं, लेकिन मेरे बार-बार मना करने के बावजूद मैं देख रहा हूं कि तुम्हारे कदम लगातार गलत रास्ते पर बढ़ते चले जा रहे हैं।

इरा : मुझे तो याद नहीं पड़ता, डैडी, कि मैंने कभी आपकी बात टाली हो।

ब्रि० वर्मा : तो फिर यह सब क्या है ?

इरा : आपके मिलिटरी शासन में रहते-रहते मैं ऊब गई हूं···अगर मैंने कालेज के दो-एक नाटकों में हिस्सा ले ही लिया तो कौन-सा अपराध कर दिया मैंने ?

ब्रि० वर्मा : जानती हो तुम क्या कह रही हो ?

इरा : जानती हूं डैडी, मैं क्या कह रही हूं, और यह भी जानती हूं कि हर आदमी को अपनी ख्वाहिशें होती हैं। वह जिन्दगी में कुछ करना चाहता है, कुछ बनना चाहता है···

ब्रि० वर्मा : क्या बनना चाहती हो तुम ?

इरा : मैं जो बनना चाहती हूं, वह तो आपको पसन्द ही नहीं !

ब्रि० वर्मा : नाचने वाली, गाने वाली !

इरा खामोश !

ब्रि० वर्मा : ···यह सब करने से पहले एक बार तो सोच लिया होता, इरा, कि तुम किस परिवार की हो···तुम्हारी ट्रैडिशन क्या हैं···तुम्हारा रुतबा क्या है···और यह सब तुम छोड़ देना चाहती हो इस एक आवारा छोकरे के लिए !

इरा : कुछ भी समझे-बूझे बगैर आप किसीके बारे में ऐसी बातें कैसे सोच जाते हैं, डैडी !

ब्रि० वर्मा : इरा, तुम जानती हो तुम किससे बात कर रही हो ?

इरा : मैं जानती हूं कि मैं अपने ब्रिगेडियर डैडी से

बात कर रही हूं···जिन्होंने अपनी बेटी की इच्छाओं और ख्वाहिशों की कभी परवाह ही नहीं की, जिन्होंने पिता होने का सिर्फ फर्ज निभाया है···

ब्रि० वर्मा : इरा ! ज्यादा जबान लड़ाओगी तो गोली मार दूंगा !

इरा : इससे ज्यादा आप और कर भी क्या सकते हैं ? आपने हमेशा अपनी बेटी को कटघरे में खड़ा करके बातें की हैं। कभी आपने यह जानने की कोशिश की कि जिन्दगी की सारी जरूरतें पूरी हो पाने के बावजूद मुझे कुछ और भी चाहिए ?—आपका प्यार, आपका दुलार ! जिन्दगी में एक बार भी बेटी कहकर आपने पुकारा मुझे ? होस्टल की घुटनभरी चारदीवारी से निकल कभी दुनिया देखने की मैंने कोशिश भी की, तो क्या मिला मुझे—आपकी डांट, आपकी फटकार ! आपकी दुत्कार ! मैं पूछती हूं, आखिर क्या अपराध किया है मैंने ?

ब्रि० वर्मा : बन्द करो अपनी यह बकवास !···क्या फैसला किया है तुमने ?

इरा : कैसा फैसला ?

ब्रि० वर्मा : शिमला जाने का ?

इरा : आपकी इजाजत मिल गई तो ठीक···वरना मैंने सोच लिया है—मैं जाऊंगी !

ब्रि० वर्मा : दैन गेट आउट ! गेट आउट इमिडिएटली !

इरा : गुड बाइ···गुड बाइ डैडी···गुड बाइ···

फ्लैश बैक समाप्त

बत्तरा का मकान। दिन। टेलिफोन की घंटी बज रही है। इरा पास ही बैठी है—जैसे बाजार से गुजरते समय की आवाजें उसके दिमाग पर हावी हैं। वह फोन उठा लेती है।

इरा : येस···वन मिनट प्लीज़···(माउथपीस पर हाथ रखकर पुकारती है) रामजी!

रामजी तेजी से आकर इरा के सामने खड़ा हो जाता है।

इरा : साहब से कहो मिस्टर सेन का फोन है। वे उन्हींसे बात करना चाहते हैं···

रामजी सीढ़ियों की तरफ लपकता है। इरा रामजी को सुनाकर कहती है :

इरा : फाइनेंस मिनिस्ट्री के मिस्टर सेन···(माउथ-पीस पर से हाथ हटाकर) वन मिनट प्लीज़··· येस···येस···

इरा बतरा का बेसब्री से इन्तज़ार करने लगती है। सीढ़ियों पर किसीके उतरने की आवाज़ सुनकर इरा उधर देखती है, हाथों में बड़े-बड़े दो सूटकेस लिए रामजी उतरता दिखाई देता है। इरा के पास पहुंचकर वह कहता है :

रामजी : साहब ने नम्बर नोट कर लेने को कहा है।

इरा : (थोड़ा झुंझलाकर) इनसे क्या कहूं?

रामजी : कह दीजिए, बाथरूम में हैं···

रामजी सूटकेस रखकर फिर वापस चला जाता है। इरा फोन पर कहती है :

इरा : सॉरी सर···ही इज़ इन द बाथरूम। अभी वो निकलेंगे तो मैं बात करवा दूंगी···जी हां। (रिसीवर रख देती है)

इरा की नज़र फिर सीढ़ियों की तरफ चली जाती है। रामजी दो और सूटकेस लिए नीचे आ रहा है। उसके पीछे-पीछे शीला भी सजी-संवरी नीचे उतर रही है।

इरा : आप जा रही हैं?

शीला : और कितने दिन रहूं—वहां भी तो सब कुछ अकेले ही देखना पड़ता है। इन्हें तो किसी

चीज़ की फिकर नहीं···जाने का नाम तक नहीं लेते—आजिज़ होकर मुझे ही आना पड़ता है।

इरा : अब कब आएंगी ?

शीला : (रहस्यभरी मुसकराहट होंठों पर लाकर) आऊंगी। फिर मुलाकात होगी। ज़रा खयाल रखिएगा इनका।

रामजी टैक्सी में सूटकेस रखने लगता है।

शीला टैक्सी में चली जाती है।

इरा वापस आकर टेलीफोन के पास बैठ जाती है। रामजी से कहती है :

इरा : एक गिलास पानी देना, रामजी।

इरा गम्भीर-सी बैठी रहती है। कभी-कभी वह बतरा के कमरे की ओर देख लेती है। रामजी पानी लाता है।

इरा : (पानी लेती है) यह सब बात क्या है, रामजी ?

रामजी : हर वार यही होता है···

इरा : साहब स्टेशन क्यों नहीं गए ?

रामजी : वो पी रहे हैं···

रामजी ट्रे और गिलास लेकर चला जाता है। इरा कुछ गम्भीर-सी उठकर चहलकदमी करने लगती है। ऊपर बतरा के कमरे का दरवाज़ा बन्द होने की आवाज़ आती है। इरा उधर देखती है। बतरा नीचे उतर रहा है। वह बहुत गम्भीर है और उसके चेहरे पर परेशानी के चिह्न हैं। बाल कुछ-कुछ उलझे हुए हैं। वह नीचे आकर सीधा दरवाज़े से बाहर निकल जाता है।

इरा, जो बतरा के सीढ़ियों से उतरने पर खड़ी हो गई है, अपनी कुर्सी पर बैठ जाती है। वहां से वह बाहर देखने लगती है। बतरा गाड़ी·

लेकर निकल जाता है।

इरा कुर्सी से उठकर फिर चहलकदमी करने लगती है। सीढ़ियों के पास आकर वह रुक जाती है। उसकी निगाह बतरा के कमरे की ओर जाती है। फिर एक झटके के साथ वह सीढ़ियां चढ़ने लगती है।

बतरा के कमरे का दरवाज़ा खोलकर इरा झिझकते-झिझकते अन्दर चली जाती है। सामने मेज़ पर आधा पिया हुआ शराब का गिलास रखा है। ऐश ट्रे में से अधजली सिगरेट का धुआं उठ रहा है। अलमारी खुली पड़ी है। कपड़े अस्त-व्यस्त हैं। इरा धीरे-धीरे अलमारी के पास जाती है। एक क्षण खुली हुई अलमारी को वह देखती रहती है। एक अल्बम कपड़ों के भीतर से झांक रहा है। इरा उसे उठा लेती है। पलंग पर बैठकर वह अल्बम के पन्ने पलटने लगती है। बहुत लोगों की बहुत तरह की तसवीरें उसमें लगी हुई हैं। इरा पन्ने पलटती जाती है। एक जगह आकर वह रुक जाती है। मुसकराते हुए बतरा की एक तसवीर आधे पन्ने पर लगी हुई है। शेष आधे पन्ने में कोई तस्वीर रही होगी—वह जगह खाली है। बतरा की तसवीर के नीचे लिखा है—'हेमेन्द्र बतरा' और खाली जगह के नीचे—'शीला'।

इरा पन्ने पलटती जाती है। इस तरह के आधे खाली कई पन्ने उसे दिखाई देते हैं।

इरा अल्बम को उसके स्थान पर ही रख देती है।

इरा एक बार कमरे को फिर देखती है। सोने के फ्रेमवाली तसवीर दीवार पर टंगी है। बतरा की तसवीर भी उसके बगल में है। दूसरी ओर की जगह खाली है। वहां सिर्फ एक सूखा

हुआ गजरा लटक रहा है। रेडियोग्राम में एक बड़ा-सा रिकार्ड लगा हुआ है, जिसकी प्लेट घूमे जा रही है। इरा उसे बन्द कर देती है।

इरा फिर पलंग पर बैठ जाती है। सामने की घड़ी टन-टन कर उठती है। ग्यारह बज रहे हैं।

बतरा का ड्राइंगरूम-कम-डाइनिंगरूम। रात। घड़ी टन-टन करके ग्यारह बजाती है। इरा खाने की मेज़ से उठती है और वाश-बेसिन पर जाकर हाथ धोने लगती है। बाहर गाड़ी के रुकने और दरवाज़ा बन्द करने की आवाज़ आती है। रामजी भागकर बाहर जाता है। बतरा भीतर आता है, गम्भीर, पिए हुए, डगमगाते कदमों से वह सीढ़ियां चढ़कर अपने कमरे में चला जाता है। दरवाज़ा ज़ोर से बन्द करता है।

इरा भी सीढ़ियों से होती हुई अपने कमरे में चली जाती है। अपना दरवाज़ा बन्द करने से पहले वह एक बार बतरा के बन्द दरवाज़े की ओर देखती है।

वह आकर पलंग पर बैठ जाती है।

बतरा के कमरे से उसी पुरानी गज़ल की धुन आने लगती है।

इरा पलंग के पास वाली खिड़की का परदा थोड़ा-सा खिसका देती है। सीढ़ियों से चढ़ता हुआ रामजी नज़र आता है। वह ट्रे में खाना ले जा रहा है। लेकिन तुरन्त ही वह वापस लौटता है। बतरा की खिड़की पर बतरा की छाया उभर आती है। वह कमरे में चक्कर लगा रहा है। रामजी फिर सीढ़ियों पर दिखाई देता है। इस बार उसकी ट्रे में सोडा और गिलास है।

खिड़की पर रामजी और बतरा की छाया उभरती है। सामान रखकर रामजी नीचे लौट जाता है। बतरा बोतल खोलकर शराब ढालने लगता है। फिर गिलास हाथ में थामे कमरे में चक्कर लगाने लगता है। रिकार्ड बजता जा रहा है।

इरा परदे को पूर्ववत् खिसका देती है। फिर पलंग पर लेट जाती है। रिकार्ड खत्म हो चुका है। फिर बतरा की आवाज़ आती है—ओ गाड !

इरा झटके से उठकर दरवाज़े तक जाती है, खोलने लगती है, पर फिर कुछ सोचकर लौट आती है और कमरे में टहलने लगती है। एक झटके से वह बत्ती बुझा देती है।

बतरा का ड्राइंगरूम-कम-डाइनिंगरूम। दिन। इरा चाय बनाकर बतरा की ओर बढ़ा देती है। बतरा गाउन में है। बाल उलझे हुए। आंखें लाल। अखबार पर ही नज़रें गड़ाए वह चाय की चुस्की लेता है।

इरा अपनी प्याली में चम्मच से चीनी घोलती है। कनखियों से वह कभी-कभी बतरा को भी देख लेती है। चाय की एक चुस्की लेकर वह बड़े ही नम्र स्वर में बतरा से पूछती है:

इरा : शीलाजी कब तक वापस आएंगी ?

लाल आंखों से घूरते हुए बतरा उसकी ओर घूरता है और बड़ी बेरुखी से कहता है:

बतरा : क्यों ?

इरा : यों ही···

बतरा अखबार में आंखें गड़ाए चाय पीता रहता है।

इरा भी चाय पीती रहती है।

चाय की आखिरी चुस्की लेकर बतरा उठ जाता है। इरा सिर झुकाए चाय पीती रहती है। अब इरा की ओर देखकर बतरा बड़े ही रूखे ढंग से कहता है :

बतरा : शीला बहुत बुरी औरत है…

इतना कहकर बतरा बिना इधर-उधर देखे, सीधी सीढ़ियां चढ़कर अपने कमरे में चला जाता है।

इरा चुपचाप उसे जाते हुए देखती रहती है।

चाय पीकर इरा अपनी कुर्सी पर आकर बैठ जाती है। सामने से उठाकर एक पत्रिका देखने लगती है। बीच-बीच में बतरा के कमरे की ओर भी तिरछी निगाहों से देख लेती है। फोन की घंटी बजती है। इरा फोन रिसीव करती है :

इरा : येस…जी हां…बताइए…जी…जी हां, मैं बोल दूंगी… (रिसीवर रख देती है)

फिर वह पत्रिका देखने लगती है। फोन की घंटी फिर बजती है। इरा फोन उठाती है।

इरा : येस…हलो ! …हलो ! …हलो ! …

फोन पर दूसरी तरफ से जैसे कोई आवाज़ नहीं है। वह झुंझलाकर फोन रख देती है।

तभी बतरा तैयार होकर नीचे उतरता है। इरा उठकर खड़ी हो जाती है। बतरा दरवाज़े की ओर बढ़ता है, फिर रुककर कहता है :

बतरा : मेरे लिए खाने पर इंतज़ार मत करना। लौटने में देर हो सकती है। (एकदम बाहर निकल जाता है)

गाड़ी स्टार्ट करने की आवाज़ आती है और फिर बाहर निकलने की भी।

इरा का कमरा। रात। इरा बैठी दमयंती को पत्र लिख रही है कि पृष्ठभूमि में बतरा की आवाज़ आती है : ओह गाड ! ओह गाड !

फिर वही गजल तैरती हुई आती है—'ऐ गमे दिल क्या करूं ?···जैसे बतरा ने रिकार्ड लगाया हो।

इरा अपने जूड़े के फूल को संभालती है, फिर पत्र लिखने लगती है :

दमयंती डियर,

शीशे की दीवार पर बतरा की छाया फिर उभरने लगती है। चाहती तो बहुत हूं, लेकिन कुछ पूछने का साहस नहीं होता। वही रिकार्ड फिर बजने लगा है और वही सन्नाटा फिर छाने लगा है। मैं क्या करूं, कुछ भी समझ में नहीं आता···

गजल की आवाज़ फिर उभर आती है। इरा उठकर परदा खिसकाती है। फिर लौटकर बत्ती बुझाती है। दरवाज़ा खोलकर बतरा के कमरे की ओर देखती है। इसी बीच घड़ी ग्यारह बजाती है। इरा दरवाज़ा बन्द करके अपने बिस्तर पर आकर लेट जाती है। बतरा की खिड़की से रोशनी आ रही है। आवाज़ कोई नहीं है···कि एकाएक इरा के दरवाज़े पर दस्तक होती है। इरा के उठने से ऐसा लगता है, जैसे वह अभी सोई नहीं थी। इरा दरवाज़ा खोलती है। चौखटों पर हाथ रखे बतरा खड़ा है।

बतरा : इरा, ज़रा मेरे कमरे में आओ··· (वह इरा की बांह पकड़ लेता है) प्लीज़! ··· (वह इरा

को अपने कमरे में ले जाता है। वहां पहुंचकर वह फटी-फटी आंखों से इरा को देखता रहता है) इरा, कोई ऐसा है जो मेरी मदद कर सके? मेरी तकलीफ को शेयर कर सके?

इरा : बात क्या है? आप···आप इतने···(वह आश्चर्यचकित है)

बतरा : कैसे कहूं वह···सब···जो मैं कहना चाहता हूं···(जैसे शब्दों को टटोलता है) इरा··· शीला मेरी···बीवी नहीं है···

इरा : (अपने को संभालकर) वह कौन है?

बतरा : (कुछ पीछे हटकर) वह मेरी कुछ भी नहीं है···अगर कुछ है तो सिर्फ एक परछाईं··· तब हम छोटे थे। साथ-साथ हमारे घर थे। मैं शीला को चाहता था। पार्टीशन ने हमें भी जुदा कर दिया। बरसों बाद उससे यहीं मुलाकात हुई तो वह शीला से वीना बन चुकी थी और मेरे एक दोस्त की बीवी···

इरा : फिर?

बतरा : अब वह कुछ भी नहीं है—महज एक औरत···

इरा : यानी?

बतरा : मुझे यही मालूम था कि वह शादीशुदा है। एक शाम वह यों ही मिल गई—गेट वे ऑफ इंडिया पर। मैंने उससे कहा—शीला, तुमने घर बसाकर बहुत अच्छा किया। तो शोख होकर वह बोली—चाहो तो तुम्हारे घर भी तुम्हारी बीवी बनकर रह सकती हूं। इरा, यही जिन्दगी है उसकी। वक्त और पैसे की मार ने उसे कहीं का नहीं रहने दिया···

इरा : तो आप शादी क्यों नहीं कर लेते?

बतरा : अब वह बीवी बनकर रहने लायक नहीं रह गई है, इरा! रह सकती ही नहीं···और मेरी मजबूरी यह है कि मैं उसे भूल नहीं पाता।

(इरा के कंधों पर हाथ रख देता है) पता नहीं इस वक्त भी वह कहां, किस नाम से दिन गुज़ार रही होगी··· (एक क्षण रुककर) मेरा अकेलापन दोहरा है, इरा! एक परत मेरी है और दूसरी शीला की। इन दोनों परतों के बीच मेरा दम घुटता है। तब मैं डेस्परेट होकर गाड को आवाज़ लगाता हूं—ओ गाड! ओ गाड!···तुम···तुम मुझे बचा लो इरा···मुझे बचा लो!···

इतना कहकर बतरा इरा को अपनी बांहों में भर लेता है, और दोनों पलंग पर गिर जाते हैं।

बतरा का घर। सुबह। टेलीफोन की घंटी बज रही है। रामजी दौड़कर आता है। फोन उठाता है। सुनते-सुनते ऊपर बतरा के कमरे की ओर देखता है:

रामजी : (फोन पर) इराजी?···जी, वे तो अभी सो रही हैं। साहब कहीं बाहर गए हैं।···जी··· अच्छा···(फोन रख देता है)

बतरा का कमरा। सुबह। बतरा का पलंग। इरा के बालों में जो गजरा लगा था, उसीके फूल तकिये पर, और उसके आसपास तथा नीचे फर्श पर बिखरे हैं। इरा अलसाई-सी उठती है। बतरा को वहां न देख कुछ अचकचाती है। फिर सिरहाने उसका रात का गाउन पड़ा देखती है। मसला हुआ एक फूल उठाकर अंगुलियों में नचाती है। चेहरे पर संतोष नहीं, एक हलका-सा विषाद है। एकाएक सतर्क होकर वह बदन चुराती है। जैसे उसे इस हाल में कोई देख ले। उसी शंका को लिए वह बतरा के कमरे का दर-

वाज़ा धीरे से खोलने के लिए बढ़ती है। दरवाज़ा थोड़ा-सा खोलकर रामजी को देखती है। बाथरूम में बतरा की ग्राहट लेती है और खामोश कदमों से अपने कमरे में भाग जाती है। अपने कमरे में वह शीशे में हर दिशा से अपने को देखती है। हलके उल्लास और हलके विषाद से वह भरी हुई है।

तभी गाड़ी रुकने की आवाज़ होती है। वह सतर्क होती है।

बतरा का घर। बतरा बाहरी दरवाज़े से आता है। सीधा अपने कमरे में जाता है। वहां इरा को न देखकर इरा के कमरे में पहुंचता है। दरवाज़ा खुला ही है। एक क्षण वह इरा को देखता रहता है, कि रात की घटना का इरा पर क्या प्रभाव है। एक क्षण तक इरा को देखते रहने के बाद वह कोट की जेब से एक छोटा-सा डिब्बा निकालता है, उसमें से अंगूठी निकालकर इरा को पहना देता है। इरा सिर झुकाए खड़ी रहती है। बतरा कुछ दूर हटकर खड़ा हो जाता है। कुछ देर बाद वह कहता है:

बतरा : मुझसे नाराज़ हो?

इरा का प्रतिबिंब आईने में पड़ रहा है। आईने के माध्यम से ही बतरा इरा को देख रहा है। इरा खामोश है। बतरा ही फिर कहता है:

बतरा : जो कुछ हो गया है, इरा, मुझे उसका कोई अफसोस नहीं है। तुम्हें अगर नामंजूर नहीं है तो मुझे सब कुछ मंजूर है।

इरा : शायद इस सबका अधिकार मुझे नहीं था। (बहुत अटक-अटककर बोलती है)

बतरा : (प्यार से उसका हाथ पकड़कर) कैसी बातें

करती हो, इरा !

इरा : (आंसू से डबडबाई आंखें लिए) कहीं मेरी मजबूरियों ने तो यह अधिकार मुझे नहीं दिला दिया है ! ...मन और मजबूरियां दो चीजें होती हैं न ? (आंसू पोंछ लेती है)

बतरा : (उसे कंधे से चिपका लेता है) पगली! (उसकी आंखें सुखाकर)ऐसा नहीं हो सकता कि हम दोनों अपनी पिछली ज़िंदगी भुलाकर एक नई ज़िंदगी शुरू करें ?

इरा : मेरी समझ में कुछ नहीं आता...

बतरा : किसकी समझ में क्या आता है, इरा ! शायद जब कुछ भी समझ में नहीं आता, तब सब कुछ ऐसे ही होता चला जाता ह । लेकिन इरा, अब जो कुछ है, मैं उसे सिर्फ एक एक्सीडेंट नहीं मान सकता । वह है ।

इरा चुपचाप बतरा के सीने से लगी सिसकती रहती है । बतरा उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए कहता है :

बतरा : ये आंसू पोंछ डालो, इरा ! इन आंसुओं की कीमत मैं जानता हूं...मैं खुद बहुत रोया हूं।

इरा डबडबाईआंखों से बतरा को देखती है। धीरे से आंचल से आंखें सुखा लेती है ।

इरा : (गहरी सांस लेकर) ओह !...

बतरा और इरा एक डिपार्टमेंटल स्टोर से बाहर निकलते नज़र आते हैं। इरा के हाथ में काफी सामान है । दोनों गाड़ी में बैठते हैं । गाड़ी चल पड़ती है ।

बतरा का कमरा। दिन । इरा कमरे की दीवार में एक कील ठोंक रही है। फिर वह पलंग पर से एक कैलेण्डर उठाती है और उसे कील पर टांग देती है—कैलेण्डर में एक खूब-

सूरत-से बच्चे की तसवीर है। इरा थोड़ा पीछे हटकर कैलेण्डर देखती रहती है। फिर और पीछे हटकर देखती है···फिर पीछे हटते-हटते वह दीवार से जा लगती है। उसकी आंखों में एक अजीब-सी चमक है।

बतरा बाहर से आता है। हाथ वाला बैग वहीं पलंग पर रखता है। कुछ कागज़ देखता है और फिर कोट उतारते हुए कहता है :

बतरा : कितनी गर्मी है ! जी चाहता है, काम-धाम छोड़कर किसी पहाड़ पर चले जाएं··· चलोगी ?

इतना कहकर वह इरा की तरफ मुड़ता है और इरा को आत्मविभोर देखकर कहता है :

बतरा : क्या देख रही हो उधर ?

अब बतरा उधर देखता है जिधर इरा की टकटकी बंधी है।

बतरा : (मतलब समझकर, मुसकराते हुए) ओह ! यह बात है ! अरे, कुछ बताया ही नहीं हमें !

इरा सिर झुका लेती है।

बतरा : ···तो कुछ टानिक-वानिक लो···अपना खयाल रखो···

बतरा का कमरा। दिन। टानिक वगैरा की शीशियां। इरा अधलेटी है। बतरा एक छोटे-से गिलास में टानिक डालकर इरा के होंठों से लगा देता है। पीकर इरा कहती है :

इरा : आप तो ऐसे कर रहे हैं जैसे मैं बीमार हूं !

बतरा : बीमार न सही, पूरा आराम तो चाहिए।

इरा : आराम के सिवा करती ही क्या हूं ?

बतरा : थोड़ा लॉन में टहल लिया करो··· (कुछ रुपये

निकालकर देता है) रामजी से फल मंगवा लेना।

इरा : तो इतने क्या करूंगी ?

बतरा : रख लो···अच्छा···मैं ज़रा एक-दो ज़रूरी फोन खटखटा लूं···फिर ज़रा राउण्ड पर भी जाना है। खाने के वक्त आ जाऊंगा।

इरा : रामजी से कहिएगा, कुछ मैगज़ीनें दे जाए। नीचे पड़ी हैं।

बतरा चला जाता है। इरा पलंग पर बैठती है। एकाएक उसका जी मितलाने लगता है। वह बाथरूम में जाती है। उल्टी करने की आवाज़ आती है। वह थकी-सी बाथरूम से निकलती है, और अपने बिस्तरपर आकर लेट जाती है।

बतरा का कमरा। दिन। इरा बिस्तर पर अधलेटी पत्रिका पढ़ रही है। दरवाज़े पर दस्तक होती है।

इरा : आ जाओ !

दरवाज़ा खुलता है। शीला सामने खड़ी है।

इरा : अरे आप !

शीला : (होंठों पर हलके विद्रूप की मुसकराहट लाकर) हां मैं !

इरा : कब आईं आप ?

शीला : कहां से ?

इरा : कहीं गई थीं न आप ?

शीला : मैं कहां जाऊंगी, इराजी ?···

शीला कमरे में चारों ओर बड़ी तेज़ी से नज़रें घुमाती है। एक दीवार पर सोने के फ्रेमवाली तसवीर के दोनों ओर बतरा और इरा की तसवीरें लगी हैं।

शीला : बतरा ने मेरे बारे में क्या-क्या बताया आपको ?

इरा : (पत्रिका में ही लीन रहते हुए) कुछ खास तो नहीं, बस यही कि आप एक-दूसरे को बहुत बचपन से जानते हैं और···

शीला : और ?···

इरा : यही कि वे आपको चाहते भी थे···

शीला : और अब नहीं चाहते ? क्या खयाल है ?

इरा : (पत्रिका पलटते हुए) चाय मंगवाऊं आपके लिए ?

शीला : फार्मेलिटी की कोई ज़रूरत नहीं। मुझे चाहिए होगी तो मैं पी लूंगी···खैर, अभी तो मैं चलती हूं; हेमेंद्र आए तो बता दीजिए, मैं आई थी···

शीला बाहर निकलती है। इरा भी कुछ सीढ़ियों तक साथ आती है। फिर बीच में ही रुक जाती है। फिर अपने कमरे में आकर दरवाज़ा बन्द करके, उससे पीठ लगाकर चुपचाप खड़ी हो जाती है।

इरा का कमरा। शाम। बतरा बाहर से आता है। ऊपर अंधेरा देखकर ठिठकता है। फिर अपने कमरे में पहुंचता है। इरा अंधेरे में चुपचाप बैठी है। बतरा बत्ती जलाकर पास आता है।

बतरा : क्या बात है, अंधेरे में बैठी हो !

इरा : यों ही···

बतरा : बड़ी गुमसुम हो, हुआ क्या है ?

इरा : कुछ नहीं···शीलाजी आई थीं।

बतरा : हां, मुझे भी मिली थीं। (सिगरेट सुलगाता है) कुछ बोलीं ?

इरा : आपसे कुछ कहा उन्होंने ?

बतरा : यों ही हवाई बातें करती रहीं।

इरा : मुझसे जानना चाह रही थीं कि आप उन्हें अभी तक प्यार करते हैं या नहीं ?

बतरा : तुमने क्या कहा ?

इरा : क्या कहती ? चुप रही।

बतरा : छोड़ो उसे, अब उससे क्या लेना-देना ! तुमने टेबलेट्स लीं ?

इरा : नहीं।

बतरा : तो ले लो। (एक टेबलेट और दवा गिलास में डालकर देता है)

बतरा सिगरेट जलाता है। इरा एकाएक असहज महसूस करती है। वह बाथरूम की तरफ जाती है। वहां उसे मितली होती है।

श्रीमती कृष्णन का ड्राइंगरूम। दिन। टी-पाट से चाय ढालते हुए मिसेज़ कृष्णन कहती हैं :

मि० कृष्णन : कोई बात नहीं···पहले-पहल ऐसा होता ही है।

इरा : मुझे तो बहुत डर लगने लगा है।

मि० कृष्णन : डर की क्या बात है ?

इरा : अकेली हूं न···कोई पास में तो है नहीं···

मि० कृष्णन : क्यों, मैं जो हूं। जब भी ज़रूरत पड़े, मुझे बुलवा लीजिए···चाय पीजिए !

इरा चाय की प्याली उठा लेती है।

मि० कृष्णन : पर हमारी पार्टी ड्यू रहेगी आपपर···

इरा खामोश रहती है। मुसकरा देती है।

मि० कृष्णन : दोनों पार्टियां एकसाथ देंगी क्या ?

इरा फिर मुसकरा देती है।

अचानक इरा के चेहरे पर तकलीफ के लक्षण उभरने लगते हैं। वह पेट पकड़ लेती है।

मि० कृष्णन : क्या हुआ ?

इरा : अचानक दर्द होने लगा है···जी भी खराब हो रहा है···(उठ जाती है) मैं फिर आऊंगी···

इरा लगभग भाग उठती है। वहां से भागती हुई ही वह सीढ़ियां उतरती है, अपने घर के गेट में घुसती है। सीढ़ियां चढ़कर अपने कमरे के बाथरूम में घुस जाती है। दर-वाज़ा जोर से बन्द होता है।

अन्दर से तरह-तरह की आवाज़ें आती हैं—फ्लश की आवाज़, नल को खोलने की आवाज़, पानी के चलने की आवाज़, फ्लश की ज़ंजीर बार-बार खींचने की आवाज़!

कई क्षण लगातार ये आवाज़ें आती रहती हैं, फिर जैसे सब कुछ शांत हो जाता है।

थोड़ी देर बाद बाथरूम का दरवाज़ा खुलता है और हांफती हुई इरा धीरे-धीरे बाहर निकलती है। माथे को थामे, वह दीवार से टेक लगाकर खड़ी हो जाती है। बार-बार वह हाथों से अपना पेट पकड़ लेती है। दर्द की तिलमिलाहट में वह दीवार का सहारा ढूंढ़ती है तो वहां लगा बच्चे का कैलेण्डर उसके हाथ में आ जाता है। इरा के हाथों में आकर कैलेण्डर टुकड़े-टुकड़े हो जाता है।

किसी तरह तकलीफ को सहती हुई इरा आकर अपने पलंग पर लेट जाती है। उसकी आंखें गीली हैं और बाल उलझ गए हैं।

धीरे-धीरे वह आंखें मूंद लेती है। वह बहुत कमज़ोरी महसूस कर रही है।

बतरा आता है। लाइट जलाकर इरा की तरफ देखता है। इरा की मुंदी हुई आंखों को देखकर समझता है कि वह सो रही है। इरा एक बार बड़ी भारी आंखों से बतरा की ओर देखती है और फिर आंखें मूंद लेती है। बतरा कोट और टाई उतारकर इरा के पास आता है और फिर धीरे से पुकारता है:

बतरा : इरा !

इरा धीरे-धीरे पलंग के सिरहाने का सहारा लेकर उठती है। बतरा उसे सहारा देता है तो वह कमज़ोर और तल्ख आवाज़ में चीख उठती है :

इरा : मत छुओ मुझे !

बतरा : इरा !

इरा : क्या बिगाड़ा था मैंने आपका ? क्या बिगाड़ा था मैंने ?…क्यों किया यह आपने मेरे साथ ?…

बतरा जैसे स्थिति को संभाल लेने के अंदाज़ में, इरा की पीठ पर हाथ फेरता रहता है।

इरा : तुमने मेरे बच्चे की हत्या की है—बोलो, ऐसा करने का क्या अधिकार था तुम्हें ?

बतरा : इरा, ये दुनियावी सिलसिले मेरे बस के नहीं हैं।

इरा : तो आपने मुझसे कहा होता।…मैं कहीं दूर चली जाती। आपपर अपनी और उसकी परछाईं तक न पड़ने देती !

बतरा : (कुछ सर पकड़कर) इरा, तुम समझतीं क्यों नहीं ? ज़िन्दगी के जिस दौर में मैं तुमसे मिला, उसमें मैं पति तो हो सकता हूं, पिता नहीं…

इरा : मगर क्यों नहीं ?

बतरा : क्योंकि मैं ज़िम्मेदारियां नहीं पालना चाहता।

इरा : बुज़दिल !

बतरा : इरा, मैं जो हूं—सो हूं।

बतरा उठकर बाहर चला जाता है। इरा फफककर रो रही है।

इरा का कमरा। दिन। इरा खड़ी है। बाल खोले। जैसे उसने बाल धोए हैं। वह बरामदे में चुपचाप खड़ी रेलिंग से लगी सड़क की ओर देख रही है। बतरा के कमरे से किसी

अंग्रेज़ी गाने की आवाज़ आ रही है। एक टैक्सी आकर रुकती है। इरा यों ही देखती होती है कि एकदम सतर्क हो जाती है। टैक्सी से शीला उतर रही है। यह देखते ही इरा तूफ़ान की सी गति से बतरा के कमरे में घुसती है और दरवाज़े को पीठ से बन्द किए-किए कहती है :

इरा : मैं यह सब बर्दाश्त नहीं कर सकती…

बतरा : (रिकार्ड देखता हुआ) क्या हुआ ? (रेडियोग्राम बन्द कर देता है)

इरा : शीला आ रही है। मुझे यह सब पसन्द नहीं। वह वापस जाएगी।

बतरा : आई है, आने दो। तुम्हें क्या फ़र्क पड़ता है ?

इरा : बहुत फ़र्क पड़ता है। (वह एक झटके से निकलकर अपने कमरे में चली जाती है और तेज़ क़दमों से इधर से उधर घूमने लगती है)

कुछ क्षण बाद दरवाज़ा खुलता है। चौखट पर शीला खड़ी है।

शीला : कल से आपकी नौकरी खत्म, इराजी ! आप अपना कोई और इन्तज़ाम कर लीजिए…

इरा : नौकरी ! कैसी नौकरी ?

शीला : नौकरी नहीं तो और क्या ? बतरा ने आपके हाथ में अंगूठी क्या पहना दी, आप मालकिन हो गई इस घर की ?

इरा : तो मैं सिर्फ़ बतरा की नौकर हूं—क्या मांग में सिन्दूर डाल लेने से ही सब कुछ होता है—ज़िन्दगी में अण्डरस्टैंण्डिंग…मगर तुम…तुम कौन होती हो—यह सब कहने वाली ? तुम्हारा क्या रिश्ता है उनसे—तुम निकल जाओ, निकल जाओ यहां से—

कहते हुए इरा शीला को कमरे से बाहर कर देती है। दरवाज़ा बन्द करके झटके से

बिस्तर पर बैठ जाती है। एक क्षण घायल पक्षी की तरह इधर-उधर देखती रहती है। फिर कुछ समझ में नहीं आता तो पास पड़े गिलास को उठाकर शीशे में पड़ते अपने अक्स पर दे मारती है। शीशा चटक जाता है। फिर भी कुछ समझ में नहीं आता तो तकिये में मुंह छिपाकर रोने लगती है।

मिसेज़ कृष्णन इरा के बिस्तर पर बैठी है। उसके सिर को सहला रही है। पीछे दरवाज़े के पास रामजी खड़ा है—उदास, मलिन।

मि० कृष्णन : (धीरे-धीरे) जो होना था, सो तो हो चुका, इराजी ! इस तरह अपने-आपको सताने से क्या होगा !

इरा चुप रहती है और टुकुर-टुकुर ज़मीन ताकती रहती है।

डा० चन्द्रमोहन का मकान। रात। इरा विजन को पास की खाट पर ले जाती है, वहीं बैठ जाती है। विजन का सर अपनी जांघ पर रख लेती है और गाने लगती है।

गीत की पहली कड़ी पर ही विजन सो जाता है। इरा उसे थपकियां देती रही है। फिर वह उठकर खिड़की पर आ जाती है। वहां खड़ी वह गीत की दूसरी कड़ी पूरी करती है, जिसमें उसकी अपनी ज़िन्दगी की कहानी है और अन्त तक आते-आते वह फफककर रो पड़ती है।

तभी दरवाज़े की घण्टी बजती है। इरा जैसे चौंककर अपने को संयत करती है। आंचल से अपने आंसू पोंछ डालती है और जल्दी से दरवाज़े की ओर लपकती है। डा० चन्द्रमोहन भीतर आते हैं। उम्र करीब पचास-

बावन, हाथ में बैग, उसी हाथ में स्टेथस्कोप, आंखों पर चश्मा। उनके कमरे का रास्ता इस कमरे में से ही है। वे बच्चों को देखते हैं।

डा० चंद्रमोहन : बच्चे सो गए? (घड़ी देखते हुए भीतर चले जाते हैं)

इरा किचन की ओर बढ़ जाती है।

डा० चंद्रमोहन के घर के रसोईघर में। रात। इरा रसोईघर में खाना गरम कर रही है। डाक्टर कपड़े बदलकर रसोईघर में आते हैं। इरा को खाना गरम करते देखकर कहते हैं:

डा० : अरे!...शांति कहां गई?

इरा : उसे शाम की छुट्टी चाहिए थी। खाना बनाकर गई है। सिर्फ गरम करना है। आप बैठिए।

डाक्टर वहीं रसोई में आसन पर बैठ जाते हैं। इरा थाली परोसकर उनके सामने रख देती है।

डा० : तुमने खाया? (खाते हुए पूछते हैं)

इरा : जी, बच्चे ज़िद करने लगे तो उनके साथ बैठकर खा लिया।

डा० : कुछ ही दिनों में बच्चे तुम्हारे हो गए...खूब हिल-मिल गए हैं...

इरा : बच्चों का क्या है? उन्हें तो जहां से प्यार मिले वे वहीं के हो जाते हैं...

डा० : (खाते-खाते ही) यहां कोई तकलीफ तो नहीं तुम्हें? मुझे तो इतना वक्त मिलता नहीं कि...

इरा : जी, नहीं, तकलीफ कैसी!

डा० : किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो बेहिचक कह देना। मुझे तो तुमने निश्चिन्त कर दिया। ये कायदे से बड़े हो जाएं, समझो मुझे सब मिल गया।

डाक्टर पानी पीकर उठते हैं। वे अपने

कमरे में चले जाते हैं। इरा बच्चों के कमरे में आ जाती है। एक पत्रिका लेकर विजन की बगल में लेट जाती है। पीछे छोटी मेज़ पर रखी अलार्म-घड़ी में ग्यारह बजे हैं। वह उसे उठाकर सुबह साढ़े पांच का अलार्म लगाती है। फिर बत्ती बुझाने से पहले वह देखती है, डाक्टर के कमरे से रोशनी आ रही है। वह उनके कमरे में जाती है। डाक्टर चंद्रमोहन बच्चों की तरह घुटने मोड़े सो रहे हैं। इरा उन्हें चादर ओढ़ाती है। बत्ती गुल करती है। लौटकर अपने कमरे की बत्ती बुझाती है और एक गहरी सांस लेकर खाट पर लेट जाती है।

इरा का कमरा। घड़ी का अलार्म बजता है। इरा अलसाई-सी बेमन से उठती है। वह धीरे-धीरे रंजन और विजन को जगाती है।

इरा विजन का मुंह तौलिये से पोंछ रही है।

इरा रंजन के जूते-फीते बांध रही है। बच्चे स्कूल जाने वाले हैं।

इरा दोनों के बस्ते लेकर मेज़ पर रख रही है। वे स्कूल से लौटे हैं।

इरा दोनों को बैठी पढ़ा रही है।

रंजन सो गया है। इरा विजन को कोई कहानी सुना रही है।

काल बेल बजती है। इरा दरवाज़ा खोलती है। डाक्टर अंदर आते हैं।

डा० : सो गए…

और वे पहले दृश्य की ही तरह बैग और स्टेथस्कोप लिए अपने कमरे में चले जाते हैं।

इरा फिर वही साढ़े पांच बजे का अलार्म लगा रही है। उसी तरह गहरी सांस लेकर और बत्ती बुझाकर इरा विजन के पास लेट जाती है।

उसीतरहअलार्म बजता है और इरा बेमन से उठती है।

ज़िंदगी का क्रम एकरस हो गया है। मगर समय गुज़रता चला जाता है। इरा के जीवन में भयावह एकरसता और नीरवता आ गई है।

डाक्टर का कमरा। रात। खाने के टेबल पर सभी बैठे हैं। डाक्टर कहता है :

डा० : मेरा यहां से तबादला होरहा है—आसाम में। डिब्रूगढ़। वहीं गौहाटी में मेरी बहन भी रहती है। इन बच्चों की बुआ। इसीलिए मैंने यह तबादला मंजूर भी कर लिया है…तुम साथ चल सकोगी ?

इरा : (कुछ अटककर) एकदम क्या कह सकती हूं ? (फिर जैसे कुछ सोचकर) इतनी दूर जाकर क्या करूंगी ?

डा० : (बहुत लिजलिजे प्यार से देखकर) इसमें मेरे दो स्वार्थ हैं, इरा ! पहला स्वार्थ तो बच्चों का है। आसाम में पता नहीं कोई हिंदी पढ़ाने वाला मिलेगा भी या नहीं। मिल भी गया तो तुम्हारी तरह इन्हें प्यार कौन दे पाएगा ? तुम चल सको तो मेरी चिंता मिट जाएगी (इतना कहकर वह उसी तरह इरा को प्यार से देखता रहता है। इरा खामोश रहती है) कोई दिक्कत

है या हिचक ?

इरा : दिक्कत तो खैर क्या हो सकती है !

डा० : तो कोई हिचक ?

इरा : हिचक भी नहीं। इतना ही है कि कभी इतनी दूर जाने की बात सोची ही नहीं, इसीलिए अटपटा लगता है···

डा० : अटपटा···कि तुम्हारे रिश्तेदार वगैरा क्या सोचेंगे, यही न ? वो तो अब भी सोच सकते हैं।

इरा : (जैसे संकेत समझकर) जी ! (लंबा करके बोलती है)

डा० : हां, और क्या ? ···

इरा : (हलके से हंसकर) आपने बहुत आगे की सोच ली ! ···

डा० : बिलकुल ! सोचना ही चाहिए। (फिर चेहरा घुमाकर जैसे कुछ संकोच से) अगर तुम्हें एत-राज़ न हो तो···तो हम शादी भी कर सकते हैं···

इरा : शादी ! (हंसती है)

डा० : (कुछ गंभीर होकर) देखो इरा, मैं मज़ाक नहीं कर रहा हूं···मैं उम्र के जिस दौर में पहुंच चुका हूं, वहां सेक्स जैसी चीज़ के लिए कोई जगह नहीं बची रह गई है···पर मैं सोच रहा था, एक तो बच्चों को तुम्हारा पक्का साथ मिल सकेगा···दूसरे तुम्हें भी एक सामाजिक मर्यादा मिल सकेगी···क्या मैं कुछ गलत कह रहा हूं ?

इरा खामोश रहती है। फिर जैसे कुछ तय करती है :

इरा : देखिए, शादी की बात तो मैं नहीं सोच पाती, पर साथ चल सकती हूं। बच्चों की देखभाल में कोई फर्क नहीं पड़ेगा···

अंधकार को चीरती हुई एक रेलगाड़ी

तेज़ी से निकली जा रही है।

आसाम में एक शाम को इरा अपने कमरे की खिड़की में खामोशी से खड़ी है। तभी दूर से कुछ गाने का स्वर उभरता है। बीहू गीत और नृत्य इरा बड़ी तल्लीनता से सुनती है। स्वर सहसा उसे अपनी ओर खींच लेता है। वह मुड़ती है। घर की नौकरानी फर्श पर गीला कपड़ा फिरा रही है। इरा उससे पूछती है :

इरा : यह गाने की आवाज़ कैसी है, ओंका ?

ओंका : ए बिहू है, मेम शौब !

इरा : बिहू ?

ओंका : नइँ जानतां ?…आपका देस में जैसा वसंत होता…वैसा ई इदर बिहू…ए औरत-मरद का मिलने का दिन…

इरा : ओह ! (फिर खिड़की से बाहर देखने लगती है)

सामने के मैदान में गाते-बजाते कुछ लोग—खासकर महिलाएं—एकत्र हो गए हैं। महिलाएं मेखला और चादर पहने हैं। गीत और नृत्य चल रहा है।

सामने के पहाड़ पर आग लगी हुई है। जलते हुए बांस बन्दूक की गोलियों की तरह फट रहे हैं। इरा डर जाती है और घर की तरफ दौड़ती है, चीखती हुई।

इरा की चीख सुनकर डिस्पेंसरी में से कंपाउंडर निकल आता है। पीछे-पीछे डा० चन्द्रमोहन भी हैं।

इरा : (आग की तरफ इशारा करके) वह देखिए… उधर…पहाड़ पर…

कंपाउंडर असमिया में कुछ कहता हुआ

ग्रौर मुसकराता हुग्रा भीतर चला जाता है। डा० ग्रागे बढ़कर इरा के कन्धे पर ग्रपना कांपता हुग्रा हाथ रख देते हैं ग्रौर जैसे बड़ी समझदारी ग्रौर साहस से कहते हैं :

डा० : डरने की कोई बात नहीं, इरा···वह जंगलों में ग्राग लगी है···बांस के जंगलों में···ये धमाके बांस फटने के हैं···यहां की बनजारा जातियां खेती के लिए ऐसे ही ज़मीन साफ करती हैं···(कन्धे पर ग्रपने हाथ की पकड़ को थोड़ा ग्रौर कसते हुए) वैसे यहां ज़रा सावधानी से रहने की ज़रूरत है। इलाका बहुत सेफ नहीं है···खास तौर से सरकारी ग्रफ़सरों के लिए···कुछ सिरफिरे लोग यों ही जानमारी पर ग्रामादा रहते हैं। गोली दाग देते हैं···हत्या कर देते हैं···

इरा खामोश रहती है। वह धीरे से डाक्टर का हाथ हटा देती है। डाक्टर फौरन ग्रपने कफ के खुले बटन बन्द करने लगते हैं ग्रौर मुड़कर डिस्पेंसरी की ग्रोर चले जाते हैं।

बच्चों का कमरा। दिन। इरा किताबों पर जिल्द चढ़ाने बैठ जाती है। इसी समय डा० हिन्दी ग्रखबारों-पत्रिकाग्रों का एक पुलिंदा लिए भीतर ग्राते हैं।

डा० : ये हिन्दी की मैग्ज़ींस हैं। (देते हुए) गौहाटी से मंगवाई हैं। तुम्हारा कुछ तो साथ देंगी··· (कुछ रुककर) बहुत चुप-चुप रहती हो, इरा···जगह पसन्द नहीं ग्राई ?

इरा : कुछ काम ही नहीं करने के लिए···जगह का क्या है ! जगह तो खूबसूरत है···

डा० : (कुछ रुपये उसकी ग्रोर बढ़ाते हुए) इन्हें भी रख लो।

इरा : मैं कहां रखूंगी इन्हें ?

डा० : अपने पास, और कहां ? मेरा और कौन है, इराजी ? (बहुत तरल हो आता है) पता नहीं क्यों तुम इस बात की सच्चाई को समझ ही नहीं रही हो !

इरा खामोश रहती है।

डा० : मैंने तुम्हारे सामने एक बात पहले भी रखी थी, इरा, उसका जवाब आज तक नहीं दिया तुमने···

इरा : सहारे की जरूरत तो सबको होती है, डाक्टर साहब···लेकिन···

डा० : लेकिन क्या ? यही तो नहीं कि तुम ऐसे वक्त पर मिलीं ज़िन्दगी में, जब कि मैं ज़ोर देकर कुछ भी नहीं कह सकता···अगर पहले···

इरा : (अपने में डूबे हुए) वह बात नहीं, डाक्टर साहब! शायद एक न एक वक्त ऐसा आता है, जब औरत सब कुछ मंज़ूर कर लेने के लिए तैयार होती है—बिना किसी इच्छा और अरमान के·· मैं आज शायद उसी मोड़ पर खड़ी हूं··· आप जो चाहते हैं—मुझे मंज़ूर है।

और कैंची से वह जिल्द का कागज़ जल्दी-जल्दी काटने लगती है।

मन्दिर। शाम। मन्दिर के घंटे बज उठते हैं। डाक्टर और इरा गले में मालाएं डाले खड़े हैं। इरा बहुत अनासक्त है। देवमूर्ति को प्रणाम करके वे चल देते हैं।

डाक्टर का कमरा। रात। पृष्ठभूमि की झींगुरों, कुत्तों और मेंढकों की आवाजों के साथ ही इरा बिस्तर पर लेटी दिखाई देती है। आंखें उदास और सूनी हैं। डाक्टर स्लीपिंग सूट की शर्ट का कालर ऊपर के बटन से बन्द किए हैं। वे इरा की बगल में आकर

लेट जाते हैं। प्यार की ग्रातुरता से कातर हैं। इरा की बांह पर वे अपनी कांपती उंगलियां रख देते हैं।

डा० : क्या सोच रही हो?

इरा : कुछ नहीं।

डा० बगल में सटकर लेट जाते हैं। वे इरा के पेट पर हाथ रखकर कमर के पास ले जाते हैं और उसे अपनी ओर करवट दे लेते हैं। इरा बेजान-सी करवट ले लेती है। डा० उसे ज़रा-सा ऊपर करके दूसरी बांह नीचे से डाल लेते हैं। उनका एक घुटना (दाहिना) थोड़ा ऊपर है, जो थोड़ा-थोड़ा कांप रहा है। डा० अपना मुंह ऊंचा करके इरा के होंठों पर होंठ रखना चाहते हैं, तो सकुचाकर इरा मुंह नीचा करके बचा जाती है। डा० अपने होंठ उसके हाथ पर रख देते हैं। उनका घुटना कुछ और कांपता है। वे बांहें कसते हैं। इरा एकाएक कसमसाकर अपना शरीर उनकी गिरफ्त से निकाल लेती है, और अपने-आपको प्रकृतिस्थ करते हुए आधी उठकर बैठ जाती है। डा० ललचाई आंखों से उसे देखते रहते हैं।

वह बिस्तर से उठकर बत्ती जलाती है··· तभी एक मेंढ़क उछलकर एक कोने में जा दुबकता है। इरा इस मेंढ़क को नहीं देखती। आवाज़ सुनकर वह यों ही दूसरी तरफ देखती है। इरा पानी का गिलास भरती है और जब तक वह पानी पीती है, एक बार फिर मेंढ़क फुदक जाता है। इरा ब्लाउज़ के खुले दो बटन बन्द करके फिर ज़रा हटकर लेट जाती है। इतनी हटकर नहीं कि इनकार का आभास हो। यहां अनिच्छा का एहसास-भर है। दीवार पर फुदकते हुए मेंढ़क की छाया फिर दिखाई देती है। डाक्टर ने फिर इरा की जांघों पर एक

टांग रख ली है। इरा कुछ सख्त होती है।

इरा : आज ऐसे ही सो लेने दीजिए।

डा० : क्यों ? अब तो तुम मेरी बीवी हो···नहीं ?

डा० का शरीर इरा के शरीर को लगभग ढांप लेता है। इरा की घुटी हुई, ऊबी सांस की आवाज़ आती है।

बगल में रखी मेज़ पर अन्य चीज़ों के साथ ही डा० के नकली दांतों का सेट रखा है।

डा० का घर। सुबह। इरा। खुले बाल। भीगे हुए। मेखला और चादर पहने है। हाथ में चाय का प्याला लिए हुए कमरे में आती है। डा० चन्द्रमोहन अभी तक किसी बच्चे की तरह सो रहे हैं।

इरा पहले तो डा० को इस तरह सोए देखती रहती है, फिर पुकारकर कहती है :

इरा : उठिए, सुबह हो गई।

इरा चाय का प्याला मेज़ पर रख देती है। फिर पुकारती है :

इरा : दिन चढ़ आया···उठिए !···

डा० अपनी आंखें खोलते हैं। बिना चश्मे के उनका चेहरा भोंदू का सा लग रहा है। उन्हें भी इरा धुंधली-सी दिखाई देती है। इरा डा० को जगा हुआ देखकर चाय का प्याला उठाकर उनकी तरफ बढ़ा देती है। डा० मेज़ से चश्मा पहनकर चाय का प्याला हाथ में ले लेते हैं। फिर एक घूंट भरकर कहते हैं :

डा० : बड़े सवेरे उठ गईं !

इरा : अलार्म लगाकर सोने की आदत पड़ गई है न। यह भी ध्यान नहीं रहा कि बच्चे तो गौहाटी गए हुए हैं।

डा० एक चुस्की और लेते हैं। फिर

चश्मे के भीतर से देखते हुए कहते हैं :

डा० : तुम तो एकदम असमिया ही लग रही हो। बच्चे तो अभी हैं नहीं, चलो, हम लोग दार्जिलिंग का चक्कर लगा आएं !

इरा : कब तक लौटेंगे रंजन और विजन ?

डा० : अभी तो छुट्टियां शुरू हुई हैं।

इरा : घर बहुत सूना-सूना-सा लगता है ।

डा० : तो चलो; तुम्हारा मन बहल जाएगा।

इरा : नहीं, ऐसे नहीं, बच्चे भी साथ रहें तो…वैसे भी, मैं कुछ दिनों के लिए नागपुर जाना चाहती हूं ।

डा० : वहां क्या है ?

इरा : मेरी एक सहेली है…

डा० : मुझे अकेला छोड़ जाओगी ?

इरा चुप रहती है।

डा० : कब तक लौटोगी ?

इरा : आठ-दस दिन बाद। क्यों ?

डा० : ठीक है। जैसा तुम चाहो। जा ही रही हो तो मेरी तरफ से अपनी सहेली को एक मेखला और चादर भी दे देना…

दमयंती का कमरा। दिन। दमयंती मेखला पहने खड़ी है और चादर ठीक कर रही है। पास बैठी इरा कहती है :

इरा : तू तो एकदम असमिया लग रही है।

इरा हंस पड़ती है।

दमयंती : अच्छा, सच-सच बता, तू वहां खुश है ?

इरा : खुशी-वशी का क्या सवाल ? जो है, सो है !

दमयंती : कमाल है ! अरी घर मिला, वर मिला, बच्चे भी मिले ! और क्या चाहिए तुझे ?

इरा : सब कुछ है, दम्भो…बस आत्मा मर गई है…

दमयंती : (छेड़ते हुए) क्यों री, मैंने तो सुना है बुज़ुर्ग पति कुछ ज़्यादा ही प्यार करते हैं ! …

इरा : एक वक्त ऐसा आता है जब कोई भी फैसला ले सकना बेहद मुश्किल होता है, शायद उसी वक्त ज़िन्दगी के कुछ अहम् फैसले ले लिए जाते हैं…

दमयंती : डाक्टर तुझे प्यार तो करता है ?

इरा : असल में वह बहुत कायर है, दम्मो…पर बहुत सीधा और साफ भी। यहां आने के लिए सोचा तो कहीं मन के कोने में यह भी था कि फिर वहां लौटकर नहीं जाऊंगी, सब खत्म कर दूंगी। लेकिन…

दमयंती : लेकिन…

इरा : कहीं भीतर कुछ ममता-सी फूट आई है। वो बच्चे भी हैं न ! …एक रिश्ता-सा पनप गया है। कुछ आदत-सी भी हो चली है। पर भीतर कहीं तकलीफ का घुटता हुआ धुआं भी है…

दमयंती : यह सब तो तुझे शादी से पहले ही सोचना चाहिए था।

इरा : जब दलदल से निकल ही नहीं सकती थी तो बेहतर था—अपने ऊपर एक पत्थर और डाल लूं।

दमयंती : शादी से पहले भी उसने छेड़छाड़ की थी ?

इरा : दम्मो, वह पुरानी वाली इरा तो उसी दिन ज़िन्दा दफन हो गई थी, जब उसकी मांग में सिंदूर भरा…

दमयंती : ठीक है…चल…उठ—आज कहीं सिनेमा देखने चलें।

इरा : नहीं रे, मैं तो यहां सोने आई हूं—सिर्फ सोने।

दमयंती आकर इरा के पास बैठ जाती है।

दमयंती का रूम। रात। दमयंती और इरा सो रही हैं। दरवाजे पर दस्तक होती है :

डाकिया : (बाहर से आवाज़) टेलिग्राम···

दमयंती कुछ चिंतित हो जाती है। दरवाज़ा खोलती है। आवाज़ से इरा भी जाग जाती है। वह सिर उठाकर देखती है। डाकिया तार देता है।

डाकिया : मिसेज़ इरा मोहन। (तार देकर चला जाता है)

दमयंती तार खोलती है। पढ़ती है।

तार पढ़कर वह उसे इरा की ओर बढ़ा देती है। इरा तार पढ़कर पूरी तरह जाग जाती है। फिर सूनी आंखों से दीवार की ओर देखने लगती है।

दमयंती : यह सुकुमार कौन है?

इरा : कंपाउंडर।

दमयंती : अब क्या करेगी?

इरा : अभी कोई गाड़ी है?

दमयंती : हां—कलकत्ता मेल।

ट्रेन तेज़ रफ्तार से दौड़ी जा रही है।

डाक्टर का घर। दिन। डाक्टर की बहन सुबक रही हैं। इरा सर पर आंचल डाले, डबडबाई आंखें लिए, सर नीचा किए सुन रही है। विजन बेतरह रो-रोकर अब चुपचाप बैठा हुआ है।

बहन : किसी सिरफिरे ने गोली मार दी, भाभी, यह सोचकर कि ये कोई बड़े सरकारी अफसर हैं। शाम को खिड़की में खड़े थे तभी···आपके इंतज़ार में भैया तीन दिन तक टकटकी लगाए रहे। बराबर पूछते रहे—वह आईं···

इरा : (आंखें सुखाते हुए) तार मिलते ही फौरन चल दी मैं···पर उन्हें देखना···(विजन, जो पास ही बैठा है, इरा से लिपट जाता है। इरा

उसे अपने साथ भींच लेती है और रो पड़ती है)

इरा चुपचाप दीवार से लगी खड़ी है। घर का सारा सामान बांधा जा रहा है। कुछ चीज़ें ही बची हैं। शेष बंध चुकी हैं। इरा विधवाओं की सी सफेद साड़ी में है। वह तटस्थ-सी है। बीच-बीच में वह भर आई आंखों को पोंछ लेती है। बहन इरा के पास आती हैं। कुछ कहने को होती हैं कि कंपाउंडर आता है। पीछे ट्रक के रुकने की आवाज़ आती है।

बहन : भाभी, मेरी मानिए, कुछ दिन हमारे साथ चलकर रहिए। बच्चे भी पास रहेंगे। आपका मन भी बदल जाएगा।

इरा : रंजन-विजन को मेरे पास छोड़ दीजिए, बीबीजी, मैं इन्हें पढ़ाऊंगी-लिखाऊंगी—कायदे से।

बहन : बच्चे तो आपके ही हैं, भाभी! आपकी जब इच्छा हो, इन्हें बुला लीजिए। अभी आपको दिक्कत होगी। भैया को भी यही चिंता थी कि आप अकेले सब कुछ कैसे संभालेंगी!

बाहर विजन रोता है। इरा लपककर जाती है। उसका मुंह पोंछते हुए ले आती है। तभी बहन पास रखे बैग में से कुछ कागज निकालती हैं।

बहन : भाभी, भैया पच्चीस हज़ार इन बच्चों के लिए छोड़ गए हैं। मेरे नाम। और यह बीस हज़ार आपके लिए। (कागज़ उसकी ओर बढ़ाती है)

सुकुमार : (आकर) लारी तैयार है…

रंजन-विजन इरा के पांव छूते हैं तो वह उन्हें छाती से लगा लेती है। फिर वे लारी की अगली सीट पर जा बैठते हैं। विजन खिड़की के पास बैठा है। लारी चल देती है। विजन खिड़की से बाहर इरा की ओर देखता है। तभी सब कुछ धूल के गुबार से भर जाता है।

इरा कुछ कदम पीछे-पीछे जाती है और खुद भी धूल के गुबार में खो जाती है।

बम्बई में इरा का कमरा। दिन। इरा बैठी अखबार देख रही है। पास ही चाय का प्याला रखा है। वह एक-एक घूंट पीती जाती है और अखबार में वांटेड कालम देखती जाती है।

इरा : वांटेड ए क्वालिफाइड टीचर टु टीच··· (पढ़ना छोड़कर)

दरवाज़े की सेंध से एक लिफाफा भीतर आता है। साथ ही दस्तक भी, जैसे डाकिया पत्र डालकर और दरवाज़ा खटखटाकर चला गया है। इरा अखबार वहीं छोड़कर उठती है और लिफाफा उठाती है। यह दमयंती की चिट्ठी है :

प्रिय सखी,

तुम्हारे भाग्य पर रोना नहीं, हंसी आती है। विमल आजकल जेल से छूटकर नागपुर आया हुआ है। उसकी सूरत देखने लायक है। वह कई बार तुम्हें यहां खोज गया है। एक बार उसे आकर देख जा न!

—दमयंती

दमयंती का घर। दिन। दरवाज़ा खुलता है और विमल प्रवेश करता है। इरा एक ओर हट जाती है और नज़रें झुका लेती है। फिर विमल की ओर देखकर कहती है :

इरा : आओ, अन्दर आओ!

विमल : (पास पड़ी कुर्सी पर बैठकर) कैसी हो?

इरा : (अर्थपूर्ण नज़रों से उसे देखते हुए) कब आए?

विमल : दो हफ्ते हो गए।

इरा : कहां थे?

विमल : (फीकी हंसी हंसकर) कलकत्ता···(जैसे सच को छिपा रहा हो)

इरा : अलीपुर—सेण्ट्रल जेल में ?

विमल सिगरेट सुलगा लेता है।

इरा : (उसे घूरकर देखते हुए) रह कहां रहे हो ? यहीं ?

विमल : एक कमरा ले लिया है।

इरा : कोई नौकरी कर ली है ?

विमल : हं···ऐसे ही कुछ लिखता-पढ़ता रहता हूं—अखबारों-पत्रिकाओं में···चल जाता है।

इरा कनखियों से विमल को देखने लगती है।

विमल फिर सिगरेट सुलगाता है। कश लेकर खांसता है।

इरा : यह क्या हाल कर लिया है ? खांसी हो गई है ?

विमल : (फीकी हंसी हंसकर) गरीबी हो गई है··· ज़्यादा गहरी—क्रोनिक···चलता हूं···

इरा : ठहरो—मैं भी चलती हूं।

दोनों बाहर चले जाते हैं।

विमल का कमरा। दिन। इधर-उधर अखबार और पत्रिकाएं भरी पड़ी हैं। पास एक वायलिन पड़ा है।

इरा : यह वायलिन किसका है ?

विमल : मेरे एक साथी कैदी का।

इरा : तुम बजाते हो ?

विमल : उसीसे सीखा था।

इरा : (वायलिन विमल को पकड़ा देती है) बजाओगे ?

विमल इरा को बड़े प्यार से देखकर वायलिन बजाना शुरू करता है। तन्मय हो जाता है कि ज़ोर से खांसी आती है। वायलिन बजता

रहता है, रुक-रुककर, और खांसी भी आती रहती है। धीरे-धीरे खांसी बढ़ती जाती है। इरा उसकी पीठ सहलाने लगती है।

इरा : तुम्हारी खांसी गई नहीं अब तक !

विमल : (उठ खड़ा होता है) मैं अभी आया। जरा चाय ले आऊं।

इरा : अरे नहीं ! अभी तो हम लोगों ने चाय पी है।

लेकिन विमल बाहर चला जाता है। इरा एक क्षण बैठी रहती है। फिर पास पड़े अखबारों-पत्रिकाओं के ढेर को उलट-पलटकर देखने लगती है। उनके बीच से एक एक्स-रे वाला पीला लिफाफा निकल आता है। वह एक्स-रे निकालकर देखने ही वाली है कि विमल की आहट होती है। वह लिफाफा अखबारों के बीच सरका देती है। विमल दोनों हाथों में चाय के गिलास लिए आता है।

विमल : तो तुमने देख लिया इसे !

इरा चुप रहती है।

विमल : खैर…ठीक है।

इरा : कुछ दिनों के लिए कहीं बाहर चले चलें ?

विमल : सीधे क्यों नहीं कहतीं कि चलो, तुम्हें सेनिटोरियम में दाखिल करवा दूं ? अरे, डाक्टर और क्या कहेगा ? वही डायलाग…आराम करो…

इरा : आबोहवा बदलने से…

विमल : (बीच में ही बात काटकर) नहीं इरा ! अब यह ज़िंदगी यों ही नहीं जाएगी। तुम फिकर क्यों करती हो ! बीमारी से मैं मरने वाला नहीं हूं…इरा ! अब तो गोली लगने से मरूंगा या फिर आत्महत्या कर लूंगा…बीमारी मुझे नहीं मार सकती !

इरा : अंट-संट बकने की आदत…

विमल : अभी गई नहीं। कौन मारेगा मुझे ! कोई भी

नहीं ! अब मैं मिट जाने वाला एक शरीर नहीं, इरा ! एक विचार हूं ! …दहकता हुआ एक विचार। और अब तुम भी मिल गई हो तो कौन मार सकता है—मुझे !

इरा : (उठते हुए) अब चलती हूं विमल, कल से यहीं आ जाऊंगी।

इरा बाहर चली जाती है।

विमल का कमरा। खिड़की के पास खड़ा विमल वायलिन बजा रहा है। इरा सूट-केस लिए, पीछे आकर खड़ी हो जाती है। सूटकेस दरवाज़े से टकराता है। विमल वाय-लिन बजाना रोककर इरा को देखता है और वायलिन रखते-रखते कहता है (सूटकेस को खास तौर से मार्क करके) :

विमल : इरा। अब जो भी, जैसी भी ज़िन्दगी है तुम्हारी, मेरे लिए उसे और खराब मत करो··

इरा : (हलके से मुस्कराकर देखती रहती है) हूं।

विमल : जो कह रहा हूं उसे समझो। सपनों और विश्वासों को लेकर जीना अब और मुश्किल है इरा···

इरा : तुम तो कह रहे थे··· (सूटकेस उठाकर रख लेती है)

विमल : जीना और सांस लेते रहना···बहुत फर्क है दोनों में···उसे समझो इरा···सांस लेने की सुविधाएं भी मिल सकती हैं, पर जीने की ? ज़िन्दगी में जो आदमी सचमुच कुछ करना चाहता है, उसे हमेशा एक अधूरी दुनिया मिलती है, इरा ! उसे वह बनाता है···पूरा करता है।

इरा : तो पूरा करो, रोकता कौन है !

विमल : रोकता कौन है ? (हंसता है) उन छुपे हुए

हाथों को तुम नहीं देख पाओगी जो विश्वासों को दबोच लेते हैं, जो हर लड़ने वाले आदमी को अकेला कर देते हैं, ताकि उसकी लड़ाई का कोई सिलसिला न बन पाए। अभी भी समय है इरा, तुम सोच लो। मेरा संघर्ष अब और भयंकर है···

इरा : (उसे पकड़ती है) ओह, इतना तेज़ बुखार ···तुम लेट जाओ प्लीज़, मैं···(उसे पकड़कर लिटाती है) डाक्टर को लाती हूं।

इरा उठकर बाहर भागती है।

विमल का कमरा। रात। डाक्टर आता है। दमयंती भी है।

डाक्टर : दमयंती, प्रेस्क्रिप्शन लिखे देता हूं···पर सबसे बड़ी चीज़ है आराम। कम्प्लीट रेस्ट। अंडरस्टैण्ड ?

दमयंती : जी···मान जाएं तब न !

डाक्टर : कन्फाइन हिम···एण्ड, यू केन डू इट··· (नुस्खा देता है) यह शुरू कर दो···

इरा केमिस्ट की दूकान से कुछ दवाइयां लेकर निकल रही है। कागज़ के थैलों में कुछ फल हैं।

इरा दवा लिए आती है। वायलिन की आवाज़ ओवरलैप करती है। विमल फिर खड़े-खड़े वायलिन बजा रहा है। इरा सामान मेज़ पर रखती है।

इरा : यह क्या ! डाक्टर ने उठने को मना किया था न !

विमल : डाक्टरों से नया डायलाग सुनने के लिए अपन तो तरस गए···

इरा : प्लीज़, कुछ तो खयाल करो अपना···कितना

ज़ोर पड़ता है इसे बजाने में… (उसे बैठा देती है)

विमल : आज तबियत बहुत अच्छी है इरा… मन खुश था इसलिए बजाने लगा… (प्यार से हाथ पकड़ लेता है) मेरे पास बैठो… और पास… (इरा बैठ जाती है) दवाइयां मुझे ठीक नहीं करेंगी इरा…

इरा : वायलिन करेगा ?

विमल : यह कमबख्त तो अपने को भुलाने का ज़रिया है… बस।

इरा : क्या-क्या भुला पाओगे विमल…

विमल : भुला तो शायद कुछ भी नहीं पाऊंगा इरा… न तुम्हें, न अपनी इस आग को… बहुत लोग याद आते हैं… वे कामरेड, वे दिन, बहसें, जुलूस, जंगलों की रातें, जेलों की कोठरियां और लाखों आंसू-भरी आंखें। विवश चेहरे…

इरा : कुछ और कभी याद नहीं आया ?

विमल : (उसे देखकर) हमेशा याद आया… कहां-कहां याद नहीं किया तुम्हें… इसी दुःख ने तो और बड़े दुःखों से जोड़ दिया था, इरा !

इरा : मन का कोई अकेला दुःख…

विमल : (बात काटकर) मन का कोई अकेला दुःख बहुत छोटा लगने लगा है इरा ! इतने बड़े और विकराल दुःखों के बीच… जब शकुंतला खेलते थे… या चन्द्रगुप्त नाटक किया था… लगा था, कुछ अहम् कर रहे हैं हम… पर अब लगता है—वह सब कितना रोमांटिक था। सच्चाइयों से दूर… इस लहूलुहान जिन्दगी से परे, एक झूठी दुनिया के बीच…

इरा : तो जो हमने तब पाया था, वह क्या झूठ था विमल…

विमल : वह था हमारा अपना। अपने से बाहर निकल-

कर जब तक हमने कुछ और नहीं देखा था। शकुन्तला या चन्द्रगुप्त अब क्या देंगे हमें ? कुच्छ भी नहीं···अब तो हमें चाहिए वह, जो आज की सच्चाइयों का धधकता हुआ दस्तावेज हो···जो हमारी बुनियादी लड़ाई को धार दे·· आदमी और आदमी की इस लड़ाई में सर्वहारा का साथ दे। (खांसता है)

इरा : तुम ठीक हो जाओ एक बार···फिर जो लड़ाई लड़ पाएंगे, लड़ लेंगे···(पीठ सहलाती है) यह खांसी ठीक हो जाए।

विमल : (छिटककर खड़ा हो जाता है) हट जाओ इरा, तुम कहीं और चली जाओ···नहीं तो ये कीटाणु तुम्हें भी खा जाएंगे···

इरा : कैसी बातें कर रहे हो विमल···

विमल : (बहुत तकलीफ से) ये कीटाणु जो मुझे खा रहे हैं···तपेदिक के नहीं, बहुत बड़े रोग के हैं इरा! ये कीटाणु एक पूरे युग को खा जाएंगे··· तुम्हारी बिसात क्या है ! ···(कुछ हिस्टीरिक होकर) तुम क्या हो ? मैं क्या हूं ? प्यार-प्यार क्या है इरा ? ···सिर्फ बेमानी और गैर-जरूरी बातें···ये कीटाणु आज को खा चुके हैं···कल को खाने जा रहे हैं···इरा ! मुझे जिन्दा रहना है तो इन्हें मारो।···इन्हें मारो···

विमल को जोरों से खांसी आने लगती है। इरा उसे बिस्तर पर लिटाती है। खांसते-खांसते विमल के मुंह से खून आता है। इरा उठकर भागती है।

इरा रास्ते में भागी जा रही है—दमयंती के यहां।

इरा दमयंती के यहां पहुंचती है।

इरा : दमयंती ! जल्दी चल···

इरा और दमयंती भागी आ रही हैं।

दरवाज़ा खोलते ही दोनों स्तब्ध रह जाती हैं। विमल मर चुका है। उसके पास पड़ा है—वायलिन और एक किताब, जिसपर लिखा है—रिवोल्यूशन !

तिलक और इरा एक पत्थर पर एक-दूसरे की ओर मुंह करके बैठे हुए हैं। सूर्योदय होने को है। लम्बी-लम्बी पेड़ों की छायाएं पूरे माहौल में फैल गई हैं। दोनों कुछ क्षणों तक खामोश बैठे रहते हैं, फिर यह कहते हुए इरा उठ खड़ी होती है :

इरा : सब कुछ मिला, फिर भी कुछ नहीं मिला।

तिलक भी उठ खड़ा होता है।

इरा चलने लगती है। तिलक भी उसके पीछे-पीछे चलने लगता है। फिर पूछता है :

तिलक : लेकिन···अब तुमने क्या सोचा है ?

इरा : किस बारे में ?

तिलक : आगे आने वाली जिन्दगी के बारे में···

इरा : (हंसकर) साफ-साफ क्यों नहीं कहते, तिलक, कि तुम मुझसे शादी कर सकते हो ! नहीं, (छोटी-सी हंसी) तुम्हारे लिए जिन्दगी का अंत बस यही है—क्यों ?···सुनो तिलक, जिसे मैंने सब कुछ बताया है, उससे शादी नहीं कर पाऊंगी—क्योंकि मैं यह नहीं कह सकती कि तुम मेरी जिन्दगी में पहले पुरुष हो। इस भ्रम के बिना आदमी न चैन से रहता है, न रहने देता है। (चलती है)

तिलक : तो इस तरह भटकती हुई क्या सारी जिंदगी काट सकोगी ?

इरा : (रुककर) यह भटकना···तड़पना···बड़े रोमानी शब्द हैं, तिलक ! इन्हें छोड़ नहीं सकते ? सच्चाई इन लफ्जों से कहीं बड़ी है।

तिलक : तुमने इस सच्चाई को मंजूर कर लिया है ?

इरा : ऐसा कौन है तिलक, जिसे ज़िन्दगी में कुछ न कुछ मिला न हो...बस मुश्किल यह है कि वह या तो वक्त से पहले मिल जाता है या वक्त के बाद...क्या कभी हम अपने वक्त में नहीं जी सकते ?

तिलक निरुत्तर रह जाता है।

इरा : (आगे चलते-चलते) दुनिया बहुत बड़ी है, तिलक ! और मेरी यात्रा भी बहुत लंबी है। चलते-चलते मैं भी किसी दिन तराइयों में, छूटी पगडंडी की तरह कहीं खो जाऊंगी... अभी तक मेरी ज़िन्दगी कुछ इस तरह की रही है कि लोग आते रहे, कुछ दिन टिके और आगे निकल गए...मैं जहां की तहां रही, लेकिन अब मैं अपनी ज़िन्दगी आप जिऊंगी, तिलक ! ...

इरा उठकर चल देती है। पीछे-पीछे तिलक भी पगडंडी पर चल पड़ता है।

○○○

डा. डिल्ली रमण रेड्डी
[illegible]

मुद्रक : शिक्षा भारती प्रेस, दिल्ली-११००३२ ११३४

২৫৯.৪৩২
জ ৯৪৫.১

सशक्त संवाद तथा मार्मिक
दृश्यों के १६ चित्रों सहित
प्रसिद्ध उपन्यास 'डाक बंगला'
पर आधारित फिल्म-स्क्रिप्ट
हिन्द